भद्रबाहु स्वामी के चरण और भद्रबाहु गुफा

प्रिय भाई, *जयजिनेन्द्र.*

इस पुस्तक की पावती देकर मुझे निश्चिंत करें कि पुस्तक आपको मिल गई है. आपका यह पता तो ठीक है न ?

आपकी सम्मति/समीक्षा प्राप्त करके मुझे प्रोत्साहन मिलेगा. प्रकाशित होने पर समीक्षा की प्रति भी कृपया भेजें

आपका उत्तर आने तक एक और पुस्तक आपको भेजने के लिये मेरे पास आ जायेगी. सादर आपका,

रंग पंचमी २००१ **नीरज जैन**

चन्द्रगिरि महोत्सव मालिका : चतुर्थ-पुष्प

चामुण्डराय वैभव

मूल कन्नड लेखक
जीवंधरकुमार होतपेटे

हिन्दी अनुवाद
प्रो. धरणेन्द्र कुरकुरी

चन्द्रगिरि महोत्सव समिति के लिये

प्रकाशक
एस.डी.जे.एम.आई. मैनेजिंग कमेटी
श्रवणबेलगोल. ५७३ १३५.
(जिला-हासन. कर्नाटक)

टाइप सैटिंग-
21st सेन्चुरी कम्प्युटर्स, सतना

मुद्रक
दीप प्रिण्टर्स
ए-८, मायापुरी इण्डस्ट्रियल एरिया, **नई दिल्ली** ११० ०६४

प्रथम संस्करण **बसंत पंचमी २००१** **मूल्य २४.००**

Chandragiri Mahotsava Series Vol 4

Chamundaraya Vaibhava

Written in Kannada by
Jeewandharkumar Hotpete

Hindi Translation
Prof. Dharnendra Kurkuri

Published by
S.D.J.M.I. Managing Committee
Shravanabelagola. 573 135.
(Distt Hassan Karnataka)
For
Chandragiri Mahotsava Samiti.

Type Setting **21st Century Computer, Satna**

Printed by
Deep Printers
A-8, Mayapuri Industrial Area, **New Delhi 110 064**

First Edition
January 2001
Rs 24 00

चन्द्रगिरि को नमन

तीसरी शताब्दी ईसापूर्व में अंतिम श्रुतकेवली भद्रबाहु स्वामी के विशाल मुनिसंघ सहित पदार्पण से पवित्र हुआ चन्द्रगिरि पर्वत दिगम्बर जैन धर्म और साधु-संस्कृति का पावन धाम रहा है. विभिन्न शिलालेखों के आधार पर हम श्रवणबेलगोल के चन्द्रगिरि पर्वत को जैन इतिहास का एक छोटा कोषागार कह सकते है.

गोमटवाणी के सम्पादक श्री एस. एन अशोककुमार ने कुछ वर्ष पूर्व यह सुझाव दिया था कि चन्द्रगिरि पर्वत पर 'चामुण्डराय बसदि' के निर्माण को सन् १९९६ में सहस्र वर्ष हो चुके हैं, अत: हमें चामुण्डराय मन्दिर का सहस्राब्दी महोत्सव मनाना चाहिये. कुछ और भी प्रस्ताव सामने थे. उन सब पर विचार-विमर्श के परिणाम स्वरूप 'चन्द्रगिरि महोत्सव' की इस योजना का सूत्रपात हुआ.

गोमटेश्वर भगवान बाहुबलीस्वामी के दो महामस्तकाभिषेकों के बीच में हर बारहवे वर्ष **'चन्द्रगिरि चिक्कबेट्टा महोत्सव'** आयोजित करने की योजना है. इस माध्यम से श्रीक्षेत्र श्रवणबेलगोल के गौरवशाली इतिहास को विश्व मानस पटल पर रेखांकित करने का शुभ संकल्प किया गया है. सन् २००१ का यह महोत्सव इसी शुभ संकल्प का सुपरिणाम है.

इस महोत्सव में साहित्य और सिद्धान्त की आराधना को विशेष उद्देश्य बना कर **'अक्षर-कलश'** के रूप मे हिन्दी-कन्नड और अंग्रेजी भाषाओ/लिपियों में एक सौ आठ ग्रन्थ प्रकाशित करने का लक्ष्य रखा गया है. इसके साथ चन्द्रगिरि से सबंधित महापुरुषों के दिव्यावदान-समारोह, शिलालेख-साहित्य सगोष्ठियां, तथा ऐसे अन्य धार्मिक एवं सांस्कृतिक आयोजनों से समन्वित यह महोत्सव अपने आप में ऐतिहासिक महत्व का होगा ऐसा विश्वास है. यह एक अत्यत शुभ सयोग है कि भगवान महावीर के २६००वे जन्म-कल्याणक वर्ष मे ही वीर-वाणी के प्रसार की इस महती योजना का शुभारम्भ हो रहा है.

श्रवणबेलगोल श्रीक्षेत्र पर कालजयी उपन्यास 'गोमटेश-गाथा' के यशस्वी लेखक श्री नीरज जैन सतना का श्रीक्षेत्र के लिये तथा इस महोत्सव के लिये सतत सहयोग मिल रहा है. महोत्सव के सयोजक के रूप में श्री अनिलजी सेठी बंगलोर एव श्री भरतकुमारजी काला मुम्बई का उल्लेखनीय योगदान है. इसके लिये वे साधुवाद के पात्र है.

'अक्षर-कलश' प्राप्त करके इस ज्ञान-यज्ञ में सहायक होने वाले, प्रकाशनीय ग्रन्थों के लेखन, शोध-सम्पादन, मुद्रण आदि करने वाले, पूजा-अनुष्ठानों का आयोजन कराने वाले तथा अन्य किसी भी प्रकार से इस आयोजन में सहयोगी होकर जिनशासन और श्रीक्षेत्र की कीर्ति के प्रचार-प्रसार में सहायक हो रहे सभी धर्मबधुओं की सुख-समृद्धि और धर्मवृद्धि के लिये हमारे मंगल आशीर्वाद

हर बारहवे वर्ष यह परम्परा निभती रहे ऐसी मंगल-मनीषा.

महोत्सव के आराध्य चन्द्रगिरि को शतशः नमन.

जैनम् जयतु शासनम्

कर्मयोगी चारुकीर्ति भट्टारक स्वामीजी

बसत पंचमी,
२९ जनवरी २००५

श्री जैनमठ श्रवणबेलगोला
कर्नाटक

चन्द्रगिरि महोत्सव की भूमिका

श्रीक्षेत्र श्रवणबेलगोल में लोकपूज्य गोमटेश्वर बाहुबली भगवान का महामस्तकाभिषेक प्रति बारहवें वर्ष सम्पन्न होने की परम्परा प्राचीन काल से चली आई है जो आज भी यथावत प्रवर्तमान है. १९८१ के फरवरी माह मे गोमटेश्वर बाहुबली प्रतिष्ठापना सहस्राब्दी एवं महामस्तकाभिषेक महोत्सव अतर-राष्ट्रीय स्तर पर अपूर्व धूमधाम से मनाया गया था.

बारह वर्ष पश्चात् दिसम्बर १९९३ मे पुन: महामस्तकाभिषेक सम्पन्न हुआ इस महान आयोजन की तैयारी से लेकर समापन तक लगभग दो वर्ष स्वस्तिश्री कर्मयोगी चारुकीर्ति भट्टारक स्वामीजी की कार्य-व्यस्तता अपने चरम पर रही उत्सव के उपरान्त बार बार हम लोग सभी आयोजनों की खूबियो और खामियो की समीक्षा करते रहे जब-जब स्वामीजी का सान्निध्य प्राप्त हुआ, तब-तब महोत्सव के संबध मे विस्तार से चर्चाएं होती रहीं और प्राय: हर आयोजन के गुणदोष दृष्टि मे आते रहे.

दो मस्तकाभिषेकों के बहु आयामी अनुभवो के आधार पर स्वामीजी के समीक्षान्तक, स्पष्ट और यथार्थ-परक चिन्तन के बल पर वे सारे विचार-विमर्श एस.डी जे एम. आई. मैनेजिग कमेटी के भावी आयोजनो के लिये मार्ग-दर्शक बनते गये. चन्द्रगिरि महोत्सव की परिकल्पना स्वामीजी के उसी चिन्तन और उन्ही समीक्षाओं-विमर्शों का सुपरिणाम है.

इस चिन्तन मे मुख्यत: दो बिन्दु उभर कर सामने आए. पहला यह कि दो महामस्तकाभिषेको के मध्य बारह वर्ष का अंतराल कुछ बडा काल हो जाता है. इस बीच श्रवणबेलगोल मे एक प्रकार की निष्क्रियता सी व्यापने लगती है. दूसरा बिन्दु यह सामने आया कि महामस्तकाभिषेक महोत्सव के समय यद्यपि जिनेन्द्र-भक्ति और धर्म-प्रभावना की दिशा मे सतोषजनक सफलताए प्राप्त होती हैं परन्तु श्रुत-भक्ति और जैन-संस्कृति की प्रभावना की दिशा मे परिणाम-मूलक कार्य मस्तकाभिषेक के अवसर पर सम्भव नहीं हो पाते, अत: इन दोनों समस्याओं का कोई विकल्प प्रस्तुत होना चाहिये.

श्रद्धेय स्वामीजी ने विचार किया कि हर बार दो मस्तकाभिषेकों के मध्य मे कोई ऐसा आयोजन हो जो बारह वर्ष की उस रिक्तता को भरने मे सहायक हो, और यथासम्भव श्रीक्षेत्र के सांस्कृतिक वैभव का उद्योतन भी करता हो. महीनों तक यह चिन्तन चलता रहा. कल्पनाओ को कागज पर

उतारने में भी कई महीने लग गये, तब **'चन्द्रगिरि-महोत्सव'** की रूपरेखा तैयार हुई जिसे यथासमय 'श्रवणबेलगोल दिगम्बर जैन मुजराई इंस्टीट्यूशंस (एस्.डी.जे.एम्.आई.) मैनेजिंग कमेटी' के विचारार्थ प्रस्तुत किया गया. कमेटी मे इस अभिनव महत्वाकाक्षी योजना का स्वागत हुआ और गम्भीर विचार-विमर्श के उपरान्त इसे स्वीकार कर लिया गया.

भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी के अध्यक्ष और एस.डी.जे.एम.आई. मैनेजिग कमेटी के पदेन उपाध्यक्ष श्रीमान साहु अशोक कुमार जैन की अध्यक्षता में 'चन्द्रगिरि महोत्सव समिति' का गठन हुआ. बगलोर के श्री अनिलजी सेठी ने सयोजक का पद ग्रहण किया. कार्याध्यक्ष का पदभार मुझे सोंपा गया. उसी बीच श्री अशोकजी का स्वास्थ्य खराब हुआ और फरवरी १९९९ में उनका निधन हो गया. इस विघ्न के कारण समिति का कार्य विधिवत प्रारम्भ नही हो पाया कुछ समय पश्चात् श्रीयुत साहु रमेशचन्द्रजी नेअध्यक्ष पद ग्रहण किया तब से समिति सक्रियता पूर्वक अपने उद्देश्यो की पूर्ति के लिये, जगत्गुरु स्वस्तिश्री कर्मयोगी चारुकीर्ति भट्टारक स्वामीजी के सुयोग्य मार्ग-दर्शन में निरन्तर प्रयत्नशील है.

श्रुत-पूजा और जैन सस्कृति की प्रभावना चन्द्रगिरि महोत्सव के मूल उद्देश्य स्वीकार किये गये है. इसके माध्यम से कर्नाटक की संस्कृति को तथा श्रवणबेलगोल के गौरवमयी इतिहास को रेखांकित करने के साथ जैन विद्याओं का प्रचार-प्रसार इस समिति का मुख्य लक्ष्य निर्धारित किया गया है.

'अक्षर-कलश अभिषेक' योजना के अतर्गत अर्थसहयोगी सुनिश्चित करके अप्रकाशित,अनुपलब्ध,मौलिक एवं अनूदित साहित्य के हिन्दी-कन्नड और अंग्रेजी भाषाओं में एक सौ आठ प्रकाशन प्रस्तुत करने का संकल्प है. प्रसगानुसार अन्य भाषाओं के साहित्य पर भी विचार किया जा सकेगा

धार्मिक और सांस्कृतिक समुद्देश्य की पूर्ति के लिये विशेष पूजा-अनुष्ठान, सभा-सगोष्ठियाँ, संत-समागम और सेमिनार तथा मीडिया आधारित योजनाएं भी समिति के सामने है. इन सभी उद्देश्यों की पूर्ति समाज के सहयोग पर ही निर्भर है. विचार करें कि आप किस योजना में किस प्रकार सहयोगी हो सकते हैं ? समिति आपके सहयोग का समुचित समादर करेगी.

विनीत,

शान्तिसदन कम्पनी बाग,
सतना. ४८५ ००१.

-कार्याध्यक्ष,

प्रस्तावना

दसवीं शताब्दी मे श्रवणबेलगोल में विन्ध्यगिरि पर गोमटेश्वर भगवान बाहुबली की विश्व-प्रसिद्ध प्रतिमा का निर्माता, सुप्रसिद्ध गंग राज्य का विश्वस्त महामात्य, वीरमार्तण्ड चामुण्डराय कर्नाटक का एक अत्यंत प्रतापी महापुरुष हुआ है. इतिहास पण्डितो ने एक स्वर से स्वीकार किया है कि उससे बडा राजनीतिज्ञ, वैसा वीर योद्धा, उतना बडा समर-विजेता और वैसा सदाचारी धर्मात्मा व्यक्ति कर्नाटक में दूसरा नहीं हुआ. एक हाथ मे शस्त्र और दूसरे हाथ में शास्त्र लेकर कर्मभूमि में उतरने वाले उस महानायक ने शस्त्र कभी झुकने नही दिया और शास्त्रकी मर्यादा कहीं खण्डित नहीं होने दी.

सम्यक्त्व रत्नाकर वीर चामुण्डराय जैसा श्रद्धा सम्पन्न जिनेन्द्र-भक्त था वैसा ही निष्ठावान मातृ-भक्त भी था. अपनी वृद्धा माता के मन में उठी पोदनपुर के बाहुबली की दर्शनाभिलाष पूरी करने के लिये उसने अपनी मातृ-भूमि पर ही बाहुबली की ऐसी विशाल और विलक्षण प्रतिमा का सृजन कराया जो हजारों वर्षो तक लाखों-करोडों दर्शनाभिलाषियों की मनोकामना पूरती रहेगी जैन सस्कृति के गौरवपूर्ण अतीत में चामुण्डराय के इस महान अवदान ने उसे सदा के लिये विश्व इतिहास मे अमर कर दिया है

विद्वान लेखक श्री जीवन्धरकुमार होतपेटे ने चामुण्डराय के उसी अवदान को इस छोटी सी आख्यायिका मे अंकित करने का प्रयास किया है. बहुभाषाविद् प्रो. धरणेन्द्र कुरकुरी ने राष्ट्रभाषा मे अनुवाद करके यह यशोगाथा हिन्दी पाठको तक पहुँचाने का सफल प्रयत्न किया है. यद्यपि लेखक द्वारा गोमटेश्वर की प्रतिष्ठा और चन्द्रगिरि पर चामुण्डराय बसदि के निर्माण काल के आकलन से सहमत होना हमारे लिये कठिन है, परन्तु यह इतिहास नहीं, आख्यान है. कालक्रम आदि का ऊहापोह यहाँ उपयुक्त नही लेखक की शैली मनोहर है और वर्णन सजीव हैं. कृति की महत्ता को देखते हुए चन्द्रगिरि महोत्सव समिति ने इसे प्रकाशन के लिये चुना, फलत: यह पुस्तक आपके हाथों में है.

इस पुस्तक के प्रकाशन का व्यय-भार 'श्री केसरीचन्द पूनमचन्द सेठी ट्रस्ट' की ओर से वहन किया गया है. समिति उनके इस दान की सराहना करते हुए आभार व्यक्त करती है पुस्तक के विद्वान् लेखक और अनुवादक के श्रम की सराहना करते हुए टाइप सैटिंग के लिये २१-सेन्चुरी कम्प्युटर्स सतना के श्री जितेन्द्र जैन तथा अल्प अवधि में मुद्रण के लिये दीप प्रिण्टर्स दिल्ली के भाई मनोहरलाल जैन के सहयोग के लिये धन्यवाद.

नीरज जैन,
निर्मल जैन,
-ग्रन्थमाला सम्पादक

मकर संक्रान्ति
१३ जनवरी २००१

चन्द्रगिरि की भद्रबाहु गुफा में
अन्तिम श्रुतकेवली भद्रबाहु स्वामी के पावन चरण बिम्ब

श्री भद्रबाहु स्तवन

स्याद्वाद विद्याम्बुधि पूर्णचन्द्र, कलवप्पु शैलोपरि राजमानम्,
श्री चन्द्रगुप्तस्य गुरुं वरेण्यं, श्री भद्रबाहु प्रणमामि नित्यम् ।

श्रुतकेवलिनां मध्ये अंतिमस्थानमाश्रितम्
लोकपूज्य गुरुशास्तं भद्रबाहु नमाम्यहम् ।

आभार

*लाडनूँ निवासी, दिल्ली प्रवासी श्रीमान पूनमचन्दजी सेठी के सुपुत्र श्री अनिल सेठीजी ने अपने '**श्री केसरीचन्द पूनमचन्द सेठी ट्रस्ट**' की ओर से अक्षर-कलश प्राप्त करके इस पुस्तक सहित चार पुस्तकों का प्रकाशन व्यय वहन किया है. समिति धर्मनिष्ठ सेठी परिवार के इस दान की सराहना करते हुए उनके प्रति आभार व्यक्त करती है.*

चामुण्डराय वैभव

1

गंगवाडी की राजधानी तलवनपुर में उल्लास ही उल्लास है। राजधानी की अष्ट दिशाएँ बन्दनवारों से सजी हुई हैं। गंगराज गारसिंह के बंकापुर में सन्यास स्वीकार कर सल्लेखना-व्रत से इहलोक त्यागने के पश्चात् उनके पुत्र राजमल्ल का राज्याभिषेक आचार्य अजित सेन तथा राज्य के वरिष्ठ अधिकारी एवं सेनाध्यक्ष चामुण्डय्या के समक्ष उत्साह पूर्वक सम्पन्न हुआ। इस संदर्भ में राज्य के समस्त जिनालयों में अभिषेक पूजन की व्यवस्था की गई। राज्य भर में दीन-दरिद्रों को दान देने की भी व्यवस्था की गई थी, राज्य की समस्त जनता उत्साह और संतोष से भर उठी।

राज्य अभिषेकोत्सव के इस संदर्भ में ही चामुण्डराय की सेवा से प्रसन्न राजमल्ल ने बड़े प्रेम से उनका आदर-सत्कार किया। 'समर-परशुराम' की उपाधि प्रदान करके उनको अपना महामंत्री भी बना लिया।

राज्याभिषेक के अगले दिन एकान्त में बैठकर प्रशासन की चिंता में डूबे राजमल्ल के पास आकर चामुण्डय्या ने कहा -

'प्रणाम महाप्रभु'

'आइए अमात्य, क्या समाचार है ?

'कल आपने जो मेरा आदर-सत्कार किया उसके प्रति मैं व्यक्तिगत रुप से आपका आभार प्रकट करने आया हूँ प्रभु।

अमात्यवर, वास्तव में हमें आपके प्रति आभार प्रकट करना चाहिए ।

वह क्यों प्रभु ?'

'अमात्यवर, पिताश्री के रहते गंग साम्राज्य के व्यवहारों से हम अनभिज्ञ थे । उनकी मृत्यु के पश्चात दक्षिण से उत्तर तक फैला यह राष्ट्रकूट-साम्राज्य शिथिल पड़ गया था । पिताश्री एवं आपने मिलकर कृष्ण चक्रवर्ती के पौत्र इन्द्र को सिंहासन पर बिठाया । फिर भी इन्द्र चक्रवर्ती को राज्य का व्यामोह नहीं रहा ।

'यह सच है प्रभु ! न जाने क्यों वे अनासक्त हो गए हैं ।'

'क्या कर सकते हैं । हमने समझा था कि गंग साम्राज्य का पतन हो ही गया, किंतु आपने उसकी रक्षा की, अतः हमें आपका आभारी होना चाहिए ।'

ऐसा क्यों कहते हैं प्रभु, मैंने तो मात्र अपने कर्तव्य का पालन किया है ।

'चामुण्डय्या जी, आपने गंग सांम्राज्य की जो सेवा की है वह केवल कर्तव्य नहीं है । वह आपके पूर्वजों की इस साम्राज्य के प्रति श्रद्धा है । आपके पिता महाबलय्या, पितामह गोविंदय्या हमारे राज-परिवार के घनिष्ट मित्र थे, उसी प्रकार आप भी हैं ।

'वह सब आपके तथा आपके पूर्वजो का हम पर उपकार है प्रभु ।'

यह बात नहीं है अमात्यवर ! राष्ट्रकूट साम्राज्य के शिथिल पड़ने से तथा पिताश्री के निधन के पश्चात् राज्य के विविध प्रदेशों में उठे उत्पातों से आतंक भर गया था । उस समय राज्य के विद्रोही पांचात्यदेव, मुद्धराजय्या आदि मांडलिकों को आपने ही तो नियंत्रित किया ? वह कार्य यदि आप न करते तो आज हम इस सिंहासन पर कैसे होते ? गंग साम्राज्य कहां होता ? आपकी इसी निष्पक्ष सेवा एवं साहस से प्रसन्न होकर हमने आपको 'समर-परशुराम' की उपाधि प्रदान करके महामंत्री, नियुक्त किया है । आपको यह प्रस्ताव स्वीकार तो है न ?'

यह सब मुझ पर आपकी कृपा एव गौरव की बातें हैं प्रभु ! उसके लिये मैं सदैव आपका ऋणी रहूँगा ।

इस प्रकार प्रभु राजमल्ल एवं महामंत्री चामुण्डय्या ने एक दूसरे के प्रति आभार प्रकट किया । अनंतर चामुण्डय्या ने घर की ओर प्रस्थान किया ।

2

गंगवाडी में राजमल्ल के राज्याभिषेक के उपरान्त शांति स्थापित हो गई थी। चामुण्डय्या राज्य प्रशासन में कई सुधार करके लोकप्रिय हो गये थे। राजमल्ल नित्य ही उनके प्रशासन से संबंधी परामर्श करते थे। एक दिन सभा के समय राज्य का एक कर्मचारी प्रवेश करके कहने लगा -

'प्रभु। सामंत राजा आपके विरुद्ध विद्रोह कर रहे हैं।'

'क्या ? उनकी इतनी उद्दण्डता ? इतना प्रबल हो गए हैं कि पुनः विद्रोह कर सकें ?'

'जी हॉं प्रभु ! चक्रवर्ती इन्द्र देव ने आपके नाम एक पत्र भी भेजा है।'

'क्या चक्रवर्ती से पत्र आया है ? क्या समाचार है, देखिये अमात्यवर ।

'वज्जलदेव के आक्रमण को रोकने के लिये इन्द्रदेव महाराज ने आपकी सहायता मांगी है प्रभु।'

'चक्रवर्ती को पुनः आक्रमण का सामना करना पड़ रहा है ? क्या आपको ज्ञात है अमात्यवर कि किस सीमांत राजा एवं सामंत ने सर उठाया है ?

उच्चंगी दुर्ग के सामंत, राज, बस, शिवर, कुणांक इत्यादि राजाओं ने इस बार गंगराज के समक्ष सर उठाने की उद्दण्डता की है प्रभु। वास्तव में यह असहनीय है, इन सब को कुचलने का आदेश दें प्रभु।'

'शान्ति से काम लें अमात्यवर ! आपकी सारी योजनाओं को हम अनुमति प्रदान करते हैं, किंतु एक बात का ध्यान रहे कि शत्रुओं को अंहिसा के मार्ग से ही कुचलने का प्रयत्न करें। हमारे आचरण से प्रजा को किसी भी प्रकार का दुःख न पहुंचे।

'जो आज्ञा प्रभु।'

शत्रुओं को कुचलने के बारे में सोचते चामुण्डय्या अपने घर पहुंचे। विचारमग्न अपने पुत्र को देखकर माता काललादेवी, पत्नि अजितादेवी ने पूछा-'क्या बात है ?' 'कुछ नहीं' कहकर विश्राम के लिये चले गए।

अगले दिन प्रातः काललादेवी अपनी पुत्र वधू अजिता देवी के साथ नीलरागमणि के नेमिनाथ तीर्थंकर की अष्टविध अर्चना में लग गईं। चामुण्डय्या भी उस दिन पूजा में सम्मिलित थे। पूजा के अनंतर चामुण्डय्या ने सेनाध्यक्ष का परिच्छद पहनकर माताजी को नमस्कार किया तो काललादेवी ने पूछा -

'यह क्या पुत्र ? तुम्हारे वेश से लगता है कि युद्ध के लिये जा रहे हो।'

'हां अम्मा'

'क्या ? परिहास के लिये मैंने पूछा तो तुम 'हां' कह रहे हो पुत्र ?'

'हां अम्मा, सीमांत राजा इत्यादि हमारे प्रभुत्व के विरुद्ध विद्रोह कर रहे हैं। उस विद्रोह को कुचलने के लिये युद्ध अनिवार्य हो गया है।

'तुम्हारा संपूर्ण जीवन तो युद्ध में ही व्यतीत हो रहा है पुत्र।'

'वही तो मेरा धर्म है अम्मा, मेरा कर्तव्य भी है। पिताश्री, तातश्री इत्यादि हमारे पूर्वजो ने गंग-साम्राज्य की सेवा की है एव इस साम्राज्य को संवारा है न अम्मा? आशीर्वाद दें कि आपका पुत्र भी इसी मार्ग पर चले।

'भगवान तुम्हारी रक्षा करे पुत्र।' काललादेवी ने पुत्रको आशीर्वाद दिया।

माता-पुत्र के इस वार्तालाप से ही सब कुछ समझकर अजितादेवी के नयनो मे अश्रु भर आए। पत्नी का समाधान करते हुए चामुण्डय्या ने कहा -

'क्या यह नया दृश्य है अजिता ? जीवन भर तुम मेरी प्रेरणा रही हो। मधुर मुस्कान से विदा करके मेरी विजय की कामना करने वाली तुम हो, मेरे जीवन की शक्ति तो तुम्हीं हो। तुम्हारे नयनों मे यह अश्रु शोभा नही देते। मुसकाते हुए मुझे बिदा करो।'

अश्रु पोछते हुए मुसकाने का प्रयत्न करती हुई अजितादेवी ने कहा -

'यह दृश्य आपके लिये नया नहीं है पर मुझे तो आपका यह युद्ध मे जाना नित्य नया लगता है।'

विश्वास छोड़कर गले लगते हुए अजिता महादेवी ने इतना ही कहा-

'आपका मंगल हों"

चामुण्डय्याने उन्हें आश्वस्ति देकर राज परिषद की ओर प्रस्थान किया।

परिषद में राजमल्ल को देखते ही चामुण्डय्या ने कहा - 'प्रभु, सैन्य को सन्नद्ध रहने का आदेश दे दिया है।

'विद्रोह को कुचलने के लिये क्या युद्ध ही एक मात्र मार्ग रह गया है अमात्यवर ! क्या यह संधि से संभव नही ?'

'नहीं प्रभु' हर प्रकार के विकल्पो पर विचार-विमर्श करने के पश्चात् ही यह निर्णय लेना पड़ा है। युद्ध की घोषणा के लिये आदेश दें प्रभु।'

'समर-परशुरामकी उपाधि हमने कुछ सोचकर ही आपको प्रदान की है। आपका अभियान सफल हो।'

राजमल्ल ने अनुमति प्रदान की।

राजमल्ल की अनुमति मिलते ही युद्ध के लिये सन्नद्ध सेना ने तूर्यनाद किया। महामंत्री तथा सेनाध्यक्ष चामुण्डय्या के नेतृत्व में सज्जित सेना अभियान के लिये चल पड़ी। तलवनपुर की प्रजा सेना को तूर्यनाद के साथ निकलते देख उनके मार्ग में पुष्प वर्षा करके अपने नरेश की विजय की कामना करने लगी।

3

चामुण्डय्या के नेतृत्व में गंगराज्य की सेना शत्रुओं को कुचलते हुए आगे बढ़ती गई। गंगसेना की विजय पताका को देखकर ही कई सामंतों ने आत्मसमर्पण कर दिया। विरोधी सीमान्त राजा तथा उद्दंड सामंतों के साथ युद्ध निरंतर चल रहा था। घने अरण्य से आवृत्त अभेद्य उच्चंगी दुर्ग को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया गया था। खेडग की युद्धमूमि में वज्जलदेव को पदाक्रांत किया गया था। बयलूर रणरंग में प्रभुवन वीर का सहार किया गया था। गंग राज्य के विरुद्ध सर उठाने की प्रवृत्ति वाले राज, बस, शिखर, कुणांक इत्यादि सामंतों ने गंग सेनाध्यक्ष के सम्मुख शस्त्र डाल दिये। चामुण्डय्या की विजय के समाचार तलवनपुर पहुँचते रहे।

कई युद्धभूमियों में विजय प्राप्त करके गंगसेना राजधानी की ओर लौटने लगी। राजधानी में वीरोचित स्वागत की तैयारियां होने लगीं। विजयोत्सव मनाने के लिये समस्त गंगवाडी राज्य सन्नद्ध हो गया था। स्वतः राजमल्ल ही महामात्य तथा सेनाध्यक्ष चामुण्डय्या के स्वागत के लिये सन्नद्ध थे। राज्य की प्रजा के लिये यह आनंदोत्सव था। राज्य के सभी मंदिरों में पूजा का प्रबंध किया गया था।

चामुण्डय्या के नेतृत्व में राजधानी की सीमा में गंगसेना के प्रवेश करते ही मंगलवाद्य बजने लगे। महाराज राजमल्ल ने चामुण्डय्या को हार पहनाकर गले लगा लिया।

गले लगाकर कहा- 'समर-परशुराम' की उपाधि आपने सार्थक बना ली।

प्रजा ने सेना पर पुष्पवृष्टि की। महाराज राजमल्ल चामुण्डय्या को राजसभा भवन में ले गए। राजसभा-भवन के गुरुपीठ पर अजित सेनाचार्य विराजमान थे। आचार्य को चामुण्डय्या ने नमस्कार किया, आचार्य ने आशीर्वाद दिया 'सद्धर्म वृद्धिरस्तु।'

प्रभु राजमल्ल ने आचार्य को नमस्कार किया। सभा-भवन में उपस्थित समस्त वरिष्ठ अधिकारी तथा प्रजा के सम्मुख प्रभु ने चामुण्डय्या की सराहना करते हुए कहा -

'गंगसाम्राज्य के महामात्य एवं सेनाध्यक्ष चामुण्डय्या आपने महामात्य के रूप में, सेनाध्यक्ष के रूप में प्रशासन कुशलता एवं अद्वितीय पराक्रम दिखाया है और गंग-साम्राज्य की रक्षा एवं वृद्धि में अद्भुत योगदान दिया है। आप समर-परशुराम हैं, ब्रह्म क्षत्रिय हैं। आपके पिताश्री से जो सेवा मिली थी उसी प्रकार आज आपकी सेवा एवं निष्ठा राज्य को उपलब्ध है। राष्ट्रकूट साम्राज्य की सहायता करके उनके शत्रुओं का आपने निर्मूलन किया है और इस प्रकार गंग साम्राज्य

का गौरव बढ़ाया है । इस अद्वितीय साहस एवं अटल राजनिष्ठा से प्रसन्न होकर इस राजसभा में उपस्थित आचार्य, गुरुजन एवं समस्त प्रजा के सम्मुख हम आपको 'वीर-मार्तण्ड', 'रणरंग-सिंह', 'समर-धुरंधर', वैरिकुलकालदंड', 'भुजविक्रम', एवं 'भटामर' उपाधियों से अलंकृत करते हैं ।

इस सम्मान के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करते हुए चामुण्डय्या ने कहा -

'मैं धन्य हो गया प्रभु, धन्य हो गया । मेरी विजय का कारण आचार्य अजित सेन जी का आशीर्वाद ही है । आपके प्रोत्साहन एवं गौरव उसके पोषक हैं । प्रजा के उत्साह ने उसे कार्यान्वित किया है । इसमें मेरा कुछ भी नहीं है प्रभु ।

'विवेक में, राजनीति-कुशलता मे, युद्ध-चातुर्य में और जिन भक्ति में आपके समान कोई भी नहीं है चामुण्डय्या' ।

'यह सब आपके, गुरुजनों के प्रजा के अभिमान के वचन हैं प्रभु । पूज्य अजितसेन जी जैसे आचार्य, आप जैसे प्रभु, एवं गंगवाड की मुग्ध प्रजा को पाकर मेरा जीवन धन्य हो गया है प्रभु । चामुण्डय्या ने राजमल्ल एवं राजसभा को आदरपूर्वक नमस्कार करके आभार प्रकट किया ।

रणरंग में विजय प्राप्त कर, राजसभा में सम्मानित होकर आए चामुण्डय्या के स्वागत के लिये पत्नी अजिता देवी, माता काललादेवी, पुत्र जिनदेवण पूरे परिवार के साथ सन्नद्ध खड़े थे । अजितादेवी ने आरती उतारकर पति का स्वागत किया । चामुण्डय्या ने पत्नी को प्रेम से देखा तथा माता के चरण स्पर्श करके प्रणाम किया ।

'सब कुशल है न अम्मा ?'

'हां कुमार, सब कुशल है । युद्ध में कोई बाधा तो नहीं हुई ?'

'नहीं अम्मा । आपके आशीर्वाद से सब कुछ बड़ी सरल रीति से हुआ ।'

'पुत्र यह सब नेमिनाथ तीर्थंकर का ही प्रभाव एवं पूज्य अजितादेवी जी के आशीर्वाद का फल है ।'

'यह सत्य है अम्मा ।'

'सुना है कि राजसभा में तुम्हारा सम्मान किया गया ।'

'हाँ अम्मा, प्रभु का मुझपर अटल प्रेम है । सबके सम्मुख गुणगान करने पर ही उनको तृप्ति मिलती है। पूज्य अजित सेनाचार्य के सम्मुख प्रभु ने अनेक उपाधियाँ प्रदान करके अतुल संपत्ति भी भेंट में भेजी है । उस सम्पत्ति का उपयोग दान-धर्मादि कार्य के लिये करो अम्मा ।'

'ऐसा ही होगा पुत्र ।'

माता-पुत्र के वार्तालाप से पति की विजयगाथा सुनकर अजिता देवी आत्म-गौरव से पुलकित हो उठीं ।

4

अगले दिन राजसभा से लौटते चामुण्डय्या ने अजितसेनाचार्य का दर्शन किया। घर पहुँचते ही पत्नी को बुलाकर पूछा -

'अम्मा क्या कर रही हैं अजिता ?'

'स्वाध्याय कर रही हैं, मैं भी उसका आस्वादन कर रही थी।'

'किस ग्रंथ का वाचन कर रही हैं ?'

'श्रावकाचार।'

'समंतभद्राचार्य का रत्नकरंडक श्रावकाचार ? चलो हम भी उससे कुछ रत्न प्राप्त कर लेंगे।'

चामुण्डय्या ने अनेक बार उस ग्रंथ का पठन किया था, और धर्म को आचरण में लाने का प्रयत्न किया था। उस दिन उनकी माता सच्चे देव-शास्त्र गुरु का विषय पढ़ रही थीं। पठन के पश्चात् तीनों एक घंटे तक धर्म चर्चा में लगे रहे, अनंतर काललादेवी ने अपने पुत्र से कहा -

'गोम्मट, क्या तुम्हें विदित है कि कल मथुरा से जिनसेन जी मुनि पधार रहे हैं ?

'हां अम्मा, अभी अजितसेनाचार्य जी ने बताया है। वह सूचना आपको देने के लिये ही तो मैं आया हूँ, किंतु आपको तो यह पहले से ही विदित है।'

'हां कुमार, मंदिर में पुरोहित जी ने बताया।' फिर पूछा - कल उनके स्वागत की तैयारियाँ कर ली हैं न पुत्र ?'

'हाँ अम्मा, वैभव के साथ उनका स्वागत करने के लिये पूरा राज-परिवार सन्नद्ध हो गया है। इतना ही नहीं अम्मा, जिनसेन मुनि के हमारी राजधानी में ही चातुर्मास करने की संभावना है।'

'यह तो बड़ी प्रसन्नता की बात है। चातुर्मास में यहाँ उनके वास के प्रबंध का दायित्व तुम्हारा है पुत्र।

'आपकी इच्छा पूर्ण होगी अम्मा।'

अगले दिन चामुण्डय्या तथा महाप्रभु राजमल्ल दोनों अपने-अपने परिवारों के साथ राजधानी के तोरणद्वार पर जिनसेन मुनि महाराज के स्वागत के लिये उपस्थित थे। अजितसेनाचार्य भी अपने संघ के साथ मुनि महाराज के स्वागत के लिये उपस्थित थे। तलवनपुर के समस्त श्रावक भी भक्ति भाव से मुनि महाराज की प्रतीक्षा कर रहे थे। अपने संघ के साथ पधार रहे मुनि को देखकर चामुण्डय्या कुछ कदम आगे बढ़कर उनको नगर-द्वार तक ले आए। वहाँ से मुनि-वृंद को

अत्यंत आदर तथा वैभव से तलवनपुर के नेमिनाथ जिनालय तक ले आए। वहीं उनके वास्तव्य की व्यवस्था की गई। स्वयं चामुण्डय्या मुनि-वृंद की वैया-वृत्तादि क्रियाओं में लगे थे। सायंकाल होने के कारण मुनि-वृंद ने सामायिक के लिये प्रस्थान किया। राजपरिवार वाले तथा अन्य समस्त जन अपने-अपने घर चले।

5

अगले दिन प्रातः चामुण्डय्या अपने परिवार समेत मुनि-दर्शन के लिये आए। तब तक आचार्य अजितसेन भी आकर जिनसेन मुनि से वार्तालाप कर रहे थे। चामुण्डय्या ने परिवार के साथ नमस्कार किया। मुनिद्वय ने आशीर्वाद दिया 'सद्धर्म वृद्धिरस्तु'। अनंतर अजितसेन ने जिनसेन से कहा-

'मुनिवर, चामुण्डय्या का नाम तो आपने सुना होगा।'

'चामुण्डय्या का नाम किसने नहीं सुना ? पराक्रम में 'वीर-मार्तण्ड' चरित्र एव धर्माभिमान के लिये 'सम्यक्त्व-रत्नाकर' इत्यादि उपाधियों से प्रख्यात ये प्रभु राजमल्ल के महामात्य एवं सेनाध्यक्ष हैं न ?

'जी हां, समस्त भारतवर्ष में इनकी कीर्ति व्याप्त है।'

कल अपने परिवार के साथ मेरे स्वागत के लिये आए थे न?

'जी हां, ये हैं इनकी माताश्री काललादेवी। जिनभक्त हैं ये। नित्य नीलरागमणि की नेमिनाथ तीर्थंकर मूर्ति की अष्टविध अर्चना करती हैं।

प्रसन्नता की बात है। ऐसी नारियों के कारण ही तो धर्म स्थिर है न मुनिवर।'

'सत्य वचन। ये है - चामुण्डय्या जी की पत्नी अजितादेवी। पति के अनुरूप पत्नी है। उनके पुत्र जिनदेवण अपने पिता की तरह ही धर्मात्मा वीर-योद्धा हैं। ये सब संपूर्ण सम्यक्त्वशाली हैं।

अजितसेनाचार्य ने चामुण्डय्या जी के परिवार का संक्षिप्त परिचय जिनसेन मुनि को कराया। अनंतर काललादेवी ने नमस्कार किया तथा कहा-

'पूज्य मुनिवर, अपने चातुर्मास के वास्तव्य के समय आप जिनसेनाचार्य के 'महापुराण' की व्याख्या सुनाकर हमें पुनीत करने की कृपा करें।

काललादेवी के स्वर में चामुण्डय्या, उनकी पत्नी, पुत्र सब ने स्वर मिलाया। जिनसेन मुनि ने भी स्वीकार किया।

एक दिन शुभ घड़ी में जिनसेन मुनि ने जिनसेनाचार्य के महापुराण का वाचन प्रारंभ किया। प्रति नित्य आदि तीर्थंकर से संबंधित एक-एक घटना का वर्णन करने लगे। महापुराण की प्रत्येक घटना का वर्णन सुनकर काललादेवी का कुतूहल

बढ़ता गया। जिनसेन ने आदि तीर्थंकरों के जीवन का वर्णन तथा जिनधर्म का वर्णन करने के पश्चात् अंत में भरत-बाहुबली की कथा का प्रारंभ किया।

आदिनाथ के एक सौ एक पुत्रों में प्रमुख दो पुत्र थे। यशस्वती से भरत तथा सुनंदा से बाहुबली। संसार से मन विमुख होते ही आदिनाथ ने अपने राज्य को यथायोग्य सभी पुत्रों में विभाजित करके वन में जाकर जैनेश्वरी दीक्षा ले ली। भरत के शस्त्रागार मे 'चक्ररत्न' प्रगट हुआ तो वह दिग्विजय के लिये निकला। षटखण्डों पर विजय प्राप्त कर राजधानी लौटते ही उनका चक्ररत्न नगर के प्रवेश-द्वार पर रुक गया।

'क्यों पूज्यवर ? कुतूहल से काललादेवी ने प्रश्न किया। जिनसेन ने उनके प्रश्न का उत्तर देते हुए कहा -

'भरत के पूछने पर राजपुरोहित ने बताया कि अभी तक तुम्हारे अनुज तुम्हारी शरण में आए नही हैं। भरत ने अपने अनुजों को शरण में आने की सूचना भेज दी। बाहुबली के अतिरिक्त सभी अनुजों ने आदि तीर्थंकर के पास जाकर जिनदीक्षा ले ली। आत्माभिमानी बाहुबली शरण में आने के बदले युद्ध के लिये सन्नद्ध हो गये।

बाहुबली युद्ध के अतिरिक्त भाई की शरण में आया होता तो क्या होता आचार्यवर ? अजितादेवी ने प्रश्न किया।

'अपने ज्येष्ट भ्राता के प्रति बाहुबली के मन में गौरव, प्रेम सदा से था। कितु भरत अब भ्राता बनकर नहीं आया था। षट्खंडों पर विजय प्राप्त करके चक्रवर्ती बनकर आया था। अपने ही अनुजों को शरण में आने का आदेश दे रहा था। अतः अन्य अनुजो ने आदिजिन की शरण में जाना ही उचित समझा तथा जिनदीक्षा ले ली। आत्म-सम्मानी व्यक्ति किसी की भी शरण क्यों स्वीकार करेंगे ? जिनसेन मुनिवर ने विवरण दिया।

'स्वीकार नहीं करेगे मुनिवर।

'हॉं, उसी प्रकार स्वाभिमानी बाहुबली को अपने आत्मबल पर पूरा विश्वास था, अतः युद्ध के लिये सन्नद्ध हो गए। दोनों ओर चतुरंग-सेना सन्नद्ध हो गईं। राज्य के वरिष्ठ मंत्रियों ने कहा कि आप दोनों की प्रतिष्ठा के लिये सैन्यबल का उपयोग उचित नहीं है। शक्ति की परीक्षा केवल आप दोनों में ही होनी चाहिए अतः आप धर्म युद्ध कीजिए।'

'यह धर्म-युद्ध, कैसा होता है मुनिवर ? चामुण्डय्या ने प्रश्न किया।

'रणभूमि में युद्ध करने वाले आपको आश्चर्य होना स्वाभाविक है। धर्म-युद्ध का अर्थ है कि अन्य सैनिकों आदि को कष्ट दिये बिना केवल संबंधित व्यक्ति से होने वाला युद्ध। यह सामान्यतः दृष्टियुद्ध, जलयुद्ध इत्यादियों से युक्त है। जिनसेन मुनि ने धर्म-युद्ध का संक्षिप्त परिचय दिया।

दोनों भ्राताओं ने धर्म-युद्ध के लिये अपनी सम्मति दी तथा दृष्टि-युद्ध प्रारंभ किया। बाहुबली का कद भरत से बड़ा था। भरत अपनी ग्रीवा उठाकर देख-देखकर पराभूत हो गये। अनंतर जल-युद्ध प्रारंभ हुआ। विशालकाय बाहुबली पर जल उछालने में भी भरत शिथिल पड़ गये तब अंतिम मल्लयुद्ध प्रारंभ हुआ। विशालकाय बाहुबली ने मुक्का मारा तो भरत चकरा गये। अनंतर बाहुबली भरत को उठाकर पटकने ही वाले थे कि अचानक उनके मन में अपने ज्येष्ठ भ्राता के प्रति आदर भर गया। उन्होंने भरत को फूल की तरह नीचे उतार दिया।

वास्तव में बाहुबली करुणाशाली थे न पूज्यवर ? काललादेवी ने बीच में ही प्रश्न किया।

'हाँ, बाहुबली करुणाशाली थे। भरत ने अपना पराभव स्वीकार न करते हुए बाहुबली पर 'चक्ररत्न' का प्रयोग किया। किंतु वह 'चक्ररत्न' धर्मचक्र होने के कारण बाहुबली का परिक्रमण करके दाहिनी ओर रुक गया। भरत लज्जित हुआ। उसे लगा कि भूमि उसे निगल रही है।

आगे क्या हुआ आर्य ?' श्रावक-समूह ने एक साथ प्रश्न किया।

'भरत जैसे धर्मात्मा ने भी संपत्ति के लिये, राज्य-लक्ष्मी के लिये, दुरभिमान से अधर्म का मार्ग अपना लिया था। इसे देखकर बाहुबली को खेद हुआ। उसका मन आहत हुआ। उसे लगा कि अपने भ्राता को इस तरह अधर्म के मार्ग पर ले जाने वाली ये संपत्ति एवं राज्य लक्ष्मी ही तो है। अतः अपनी सारी संपत्ति एवं समस्त राज्य भरत को हीं अर्पित कर बाहुबली त्याग वीर बन गये। सब कुछ त्याग करने के पश्चात् बाहुबली जिनदीक्षा स्वीकार करके तपस्या के लिये निकले। भरत को भारी पश्चात्ताप हुआ। बाहुबली से क्षमायाचना की, किंतु बाहुबली तपस्या के लिये निकल ही गये। एक ही स्थान पर खड़े होकर बाहुबली ने बारह महिने तपस्या की, किंतु उन्हें केवलज्ञान प्राप्त नही हुआ।

'क्यों आर्य ?' चामुण्डय्या ने प्रश्न किया।

'हां, भरत ने भी यही प्रश्न अपनी माता यशस्वति से किया था। आदि प्रभु से यह प्रश्न करने को कहा उसने। कैलाशगिरी जाकर आदिनाथ के दर्शन कर लेने के पश्चात् भरत ने पूछा कि बाहुबली अभी तक केवल ज्ञानी क्यों नहीं हुए। आदिनाथ जी ने कहा- 'बाहुबली के मन में यह बात खटक रही है कि वह अपने भ्राता की भूमि पर खड़ा है। भरत तुम जाकर उसे समझा दो।'

उसी प्रकार भरत तपस्या में लीन बाहुबली के पास जाकर उनके चरणों में मस्तक रखकर कहने लगे 'भ्राता, तुम्हें अभी तक केवलज्ञान प्राप्त नहीं हुआ, इसका कारण है कि तुम्हारे मन में यह बात खटक रही है कि तुम मेरी भूमि पर खड़े हो। वह बात अपने मन से निकाल दो। यह भूमि तुम्हारी ही तो है। तुम्हीं

ने इसका त्याग किया है। जब बाहुबली के मन से वह बात निकल गई तो उन्हें केवलज्ञान प्राप्त हुआ। वह 'केवली' बन गये। पौदनपुर में भरत ने बाहुबली की एक ऊंची प्रतिमा की प्रतिष्ठापना की।

देखिये, सज्जनों, विजय प्राप्त कर लेने के पश्चात् बाहुबली ने समझा कि यह सब सांसारिक बंधन के कारण हैं, अतः सब का त्याग करके वह त्यागवीर केवली बन गये। कहने की आवश्यकता नहीं है कि त्याग ही जीवन का ध्येय होना चाहिए। वही मुक्ति का मार्ग है। इतना कहकर जिनसेन मुनि ने भरत-बहुबली कथा भाग को समाप्त किया। काललादेवी अत्यंत भावुक होकर धर्मोपदेश सुन रही थीं। उनके नेत्रों से आश्रु-धारा बह रही थी। पुत्र-वधू अजितादेवी ने जगाया-

'माताजी, चलिए, घर चलेंगे ?

'हाँ, क्या ? .....घर ? मैं घर नहीं चलूँगी। मुझे पौदनपुर के बाहुबली का दर्शन करना है।

'अपनी सास की इच्छा सुनकर अजितादेवी दुविधा में पड़ गईं। उन्होंने कहा ?

'माताजी वह तो चतुर्थ युग की घटना थी। अब तक हमने जो सुना वह महापुराण का कथा-भाग मात्र था ?'

'होगा अजिता। पौदनपुर में बाहुबली की प्रतिमा तो होगी न ?'

किंतु माताजी, भरत के द्वारा प्रतिष्ठापित बाहुबली की प्रतिमा को हम पंचमकाल में देख नहीं सकते।'

'क्यों नहीं देख सकते ?' यह प्रश्न करते हुए नेमिनाथ तीर्थंकर की प्रतिमा के पास जाकर काललादेवी ने भगवान को साक्षी मानकर व्रत ले लिया- 'प्रभु, जब तक मैं पौदनपुर के बाहुबली के दर्शन नहीं करती तब तक क्षीर का सेवन नहीं करूंगी। अजितादेवी स्तब्ध होकर अपनी सास को देखती रहीं। तब तक अन्य मुनिवृंद के क्षेम-समाचार से निवृत्त आए चामुण्डय्या अपनी माता तथा पत्नी समेत घर की ओर चले।

6

भरत बाहुबली की कथा सुनने के पश्चात सम्यक्त्व-शिरोमणि काललादेवी प्रति-नित्य शास्त्राध्ययन में समय व्यतीत करने लगीं तथा पौदनपुर के बाहुबली के दर्शन के लिये तरसती रहीं। सदा मौन होकर पंच-नमस्कार मंत्र का पाठ करती हुई नीलरागमणि के नेमिनाथ तीर्थंकर की अष्ट-विध अर्चना में लीन रहने लगीं। अपने अंतरंग में बाहुबली की प्रतिष्ठापना कर ली। पुत्र-वधू से वार्तालाप कम हो गया।

चातुर्मास समाप्त होने के उपरान्त जिनसेन मुनींद्र ने तलवनपुर से कटवप्र की ओर प्रस्थान किया। चामुण्डय्या के आग्रह के कारण आचार्य अजितसेन ने कुछ और समय तक वहीं रहना स्वीकार कर लिया।

एक सप्ताह से राज्य के प्रबंध में व्यस्त चामुण्डय्या अपनी माता की भावनाओं की ओर अथवा पत्नी के कथन की ओर ध्यान नही दे सके। एक दिन राजमहल लौटते ही चामुण्डय्या किसी प्रेरणा से अपनी माता से मिलने चले।

'अजिता ! अम्मा कहां हैं ?'

'माताजी शास्त्र अध्ययन में लीन हैं।'

आजकल माताजी मौन रहती हैं, एक तरह से निरासक्त हो गयी हैं। क्या बात है ?

'राज-कार्य मे मग्न आपको हमारी बातें कहाँ सुनायी देती हैं, माताजी एक सप्ताह से सदा पूजा मे स्वाध्याय मे लीन रहती हैं। भोजन, विश्राम, निद्रा का ध्यान ही नहीं। दूध का सेवन नहीं करतीं।

क्या ? अम्मा दूध का सेवन नहीं करतीं ? ' क्यों ?'

भरत-बाहुबली की कथा सुनने के पश्चात् माताजी ने नियम ले लिया है कि जब तक पौदनपुर के बाहुबली के दर्शन नहीं होंगे, दूध का सेवन नहीं करेंगीं।

पौदनपुर के बाहुबली को देखने तक ? यह कैसी अभिलाषा है ?'

माताजी को कई बार समझाने पर भी उनका मत परिवर्तित नहीं हो सका।'

'समझ मे नहीं आता कि क्या करें। पूज्य अजितसेनाचार्य ही हमारा मार्गदर्शन कर सकेंगे। चलो उनके दर्शन करेंगे।

नेमिनाथ तीर्थंकर जिनालय में अजितसेनाचार्य शास्त्राध्ययन में मग्न थे। पत्नी समेत आचार्य की चरण वन्दना कर चामुण्डय्या को देखकर अजितसेनाचार्य ने पूछा -

'क्या समाचार है चामुण्डय्या जी। आप चिंताकुल लक्षित होते हैं।'

'जी हा आर्य। अम्माजी ने नियम ले लिया है कि पौदनपुर के बाहुबली के दर्शन करने तक दूध का सेवन नहीं करेंगी। समझ में नहीं आ रहा है कि उनका समाधान कैसे करें।'

उसकी चिंता न करें। धर्म की रक्षा सदा से नारी ने ही की है। आपकी माता सम्यक्त्व जीवी हैं। उनके मन में इस विचार के आने का अर्थ है कि उनकी प्रेरणा से कोई महान कार्य होने वाला है। केवल भव्य-जीवो के मन में ऐसे विचार आते हैं। किंतु आप अपनी माता की मन शांति के लिये जिनक्षेत्र का दर्शन कर आयें। इस समय कटवप्र क्षेत्र का भी दर्शन करना न भूलिएगा। श्रुतकेवली भद्रबाहु तथा चंद्रगुप्त मुनींद्र से यह प्रदेश पवित्र हो गया है इस समय वहाँ नेमिचंद्र सिद्धान्त चक्रवर्ती विराजमान हैं। उनको माता जी की अभिलाषा के बारे में बता दें तो वे आपका मार्गदर्शन अवश्य कर सकेंगे।'

कटवप्र का नाम सुनते ही चामुण्डय्या के शरीर में शक्ति-संचार का अनुभव हुआ। उसे व्यक्त न करके नमस्कार करते हुए कहा -

'ठीक है पूज्यवर। आपके आदेश के अनुसार ही चलूँगा। 'अजितादेवी ने भी नमस्कार किया तो आचार्य ने दोनों को आशीर्वाद दिया। घर पहुँचकर देखा तो काललादेवी अब भी शास्त्राध्ययन में लीन थीं। चामुण्डय्या भी पत्नी समेत शास्त्राध्ययन के लिये बैठ गये। अध्ययन समाप्त होते ही काललादेवी ने अपने पुत्र की ओर देखा-

'क्या राज्य का कार्य समाप्त हुआ कुमार ?'

'हां अम्मा।'

'क्या बात है पुत्र कि आज इतने समय तक अध्ययन कर रहे हो।'

'हां अम्मा, आपसे कुछ कहना था, इसलिए बैठा था कि आपके अध्ययन में बाधा न पड़े।

'कोई बात नही पुत्र, कहो क्या बात है ?'

'जिन-क्षेत्र दर्शन करने की मेरी इच्छा है अम्मा। पौदनपुर के बाहुबली के दर्शन करने की अभिलाषा उत्कट हो गयी है, अतः कल ही महाप्रभु की अनुमति पाकर आपके साथ तीर्थ-यात्रा के लिये निकलना चाहता हूँ अम्मा।

'सच ! मैं धन्य हो गयी पुत्र। तुम मेरी ही अभिलाषा तथा भावनाओं को देखकर चलते हो, मुझे बड़ा हर्ष हुआ कुमार।'

'तो आप मेरा अनुरोध मानेंगी ?'

'वह क्या है कुमार ?'

सुना है कि आपने दूध का सेवन न करने का नियम ले लिया है। अब क्षेत्र-दर्शन के लिये चल रहे हैं तो आपकी अभिलाषा पूर्ण होगी। अतः आप दूध का सेवन करें।'

'नहीं कुमार, यह नहीं होगा। पौदनपुर के बाहुबली के दर्शन करने पर ही दूध ग्रहण करूंगी।'

'तो ठीक है अम्मा, जैसी आपकी इच्छा।'

'कल ही जिन क्षेत्र यात्रा का प्रबंध करूंगा ?'

'ठीक है कुमार। '

7

चामुण्डय्या ने महाप्रभु राजमल्ल को माता की अभिलाषा के बारे में बताकर जिन-क्षेत्र दर्शन के लिये अनुमति ले ली तथा यात्रा की तैयारियाँ भी कर ली। नेमिनाथ तीर्थंकर का पंचामृताभिषेक करके आचार्य अजितसेन का आशीर्वाद ले लिया। अनंतर अपने परिवार समेत यात्रा प्रारंभ की।

मार्ग में मंदिरों के दर्शन, मुनियों को आहार-दान की व्यवस्था, दीन-दुर्बलों को चतुर्विध दान करते हुए यात्रा करने वाले चामुण्डय्या को पौदनपुर का मार्ग नहीं मिला। माता को कैसे संतुष्ट करें ? यह प्रश्न मन में बार-बार उठने लगा। चामुण्डय्या कई दिनों के निरंतर प्रयाण के पश्चात् कवटप्र पहुँच गये।

नेमिचंद्र सिद्धान्त-चक्रवर्ती से भेंट करने की उत्सुकता, श्रुतकेवली भद्रबाहु मुनि की पूजा करने की इच्छा प्रबल होने पर भी रात्रि अधिक होने के कारण कटवप्रगिरि की गोदवाले सरोवर के समीप, वन में वास्तव्य किया।

अगले दिन प्रातः स्नानादि के अनंतर चामुण्डय्या अपने परिवार के साथ कटवप्रगिरि पर चले। चन्द्रगुप्त जिनालय में ध्यानासक्त नेमिचंद्राचार्य को देखकर कुछ समय वहीं बैठ गये। ध्यान टूटने पर आचार्य ने नयन खोले तथा चामुण्डय्या के परिवार को देखकर प्रश्न किया -

'सब कुछ कुशल है न ? अभी किस ओर से आये ?

'तलवनपुर से पूज्यवर।'

'अजितसेनाचार्य, प्रभु राजमल्ल एवं वहां की प्रजा सब कुशल है ?'

'हां पूज्यवर, तनिक रुककर चामुण्डय्या ने फिर कहा-'पूज्यवर, पार्श्वनाथ-स्वामी की पूजा की तैयारियां हो चुकी हैं। आपसे निवेदन है कि आप भी पधारें।'

'प्रसन्नता की बात है, चलिए।

'पूजा के अनंतर नेमिचंद्र सिद्धान्त चक्रवर्ती को वार्तालाप के समय चामुण्डय्या के जिन-क्षेत्र दर्शन का उद्देश्य ज्ञात हुआ। उन्होंने कहा -

'श्रुतकेवली भद्रबाहु एवं चंद्रगुप्त मुनींद्र से पुनीत इस क्षेत्र का दर्शन आपने किया है, अतः आपकी इच्छा प्रायः पूर्ण होगी।'

'आपके अनुग्रह से यह सच हो पूज्यवर।'

आहार का समय होने के कारण चामुण्डय्या ने परिवार के साथ अपने शिविर की ओर प्रस्थान किया। वे आहार के लिये पधारने वाले जिनमुनि के पड़गाहन की तैयारियां करने लगे। कटवप्र के श्रावक मुनि के पड़गाहन के लिये सन्नद्ध थे। कटवप्रगिरि से मुनिवृंद आहारचर्या के लिये निकले। मुनि के पड़गाहन के लिये किसी ने कुंभ सजाया था। कोई फल-पुष्पादि से तथा कोई आरती से मुनि के लिए पड़गाहन के लिये उत्सुक खड़े थे। सभी मुनियों ने अपने-अपने नियम के अनुसार श्रावकों के घर प्रवेश करके नवधा भक्ति पूर्वक दिया गया आहार स्वीकार किया। चामुण्डय्या के भाग्य से उस दिन नेमिचंद्राचार्य का आहार उन्हीं के शिविर में हुआ। आहार के अनंतर सभी मुनि कटवप्रगिरि लौटकर सामायिक स्वाध्याय आदि नित्य कियाओं में लग गये।

उस दिन सायंकाल चामुण्डय्या अपने परिवार समेत शीघ्र ही कटवप्रगिरि आ गये। वार्तालाप के समय नेमिचंद्राचार्य से कहा-

'पूज्यवर, मैंने आपको अम्मा की इच्छा के बार में बताया है। अब हम सब आपसे इस क्षेत्र की महिमा सुनना चाहते हैं।'

कुछ समय के लिये आचार्य मौन हो गये। श्रावक धर्मोपदेश की इच्छा से आने लगे थे। आचार्य ने आश्वासन दिया कि आज धर्मोपदेश के साथ क्षेत्र के इतिहास एवं महिलाओं के बारे में व्याख्यान देंगे। जन-समूह संतोष से सावधान होकर बैठ गया। आचार्य ने अपनी मधुरवाणी से कटवप्र का इतिहास प्रारंभ किया।

8

'सज्जनो' यह क्षेत्र कटवप्र, कलवप्पु नाम से जाना जाता है। लगभग तेरह सौ वर्ष प्राचीन यह हमारा पवित्र क्षेत्र है। महावीर तीर्थंकर के निर्वाण के अनंतर उनके लोक-कल्याण कारक तत्वों के प्रचार करनेवालों में अनेक आचार्य प्रमुख हैं। उनके अनंतर लोहाचार्य, जम्बूस्वामी, विष्णुदेव, अपराजित, गोवर्धन, भद्रबाहु, विशाखाचार्य, प्रोष्टिलाचार्य, कृत्तिकाचार्य, जयनाम, सिद्धार्थ, धरसेन, बुधिल इत्यादि आचार्यों ने जैन सिद्धांत का प्रचार करके उसकी रक्षा की है। उनकी परंपरा

के अंतिम श्रुतकेवली भद्रबाहु मुनि को उज्जैन रहते दिव्यज्ञान से ज्ञात हुआ कि उत्तर-भारत में बारह वर्ष तक अकाल पड़ेगा। अतः वे सम्राट चंद्रगुप्त के साथ दक्षिण भारत की ओर पधारे। अत्यंत सुभिक्षवाले प्रदेश कटवप्र में उन्होंने वास किया तथा यहीं से स्वर्ग गमन कर लिया। इनके शिष्य चंद्रगुप्त सम्राट ने भी मुनि-दीक्षा प्राप्त कर प्रभाचद्र नाम पाया और आयु के अत मे समाधि ली।

''कौन सा आधार है पूज्यवर कि यह पवित्र परंपरा चली आ रही है। जिनदेवण ने प्रश्न किया।

'यह अच्छा प्रश्न है। आचार्य ने संदेह का निवारण किया-भद्रबाहु तथा चंद्रगुप्त के यहाँ आने के पश्चात् दक्षिण भारत में जिन धर्म का प्रसार अधिक हुआ। कटवप्रगिरि मे स्थित यह चद्रगुप्त जिनालय चद्रगुप्त की स्मृति में बनवाया गया है। वहाँ देखिए उस शिला शासन से यह सारी बातें विदित होती है। प्रतीति है वहाँ दिखायी देनेवाली गुफा मे भद्रबाहु मुनीद्र ध्यानासक्त रहते थे तथा वे उनकी पादुकाएँ है। वैसे ही माना जाता है कि पहाड़ के सिरेवाली पादुकाएँ भद्रबाहु तथा चंद्रगुप्त मुनींद्र की हैं।

इस प्रकार अतिम श्रुतकेवली भद्रबाहु तथा सम्राट चंद्रगुप्त मौर्य के यहाँ पर सल्लेखना प्राप्त कर लेने के पश्चात् अनेक आचार्य और उनके शिष्यादिको ने इस स्थान को ध्यान एव समाधि मरण के लिये अत्यत योग्य समझा। सैंकड़ों श्रावकों और राजा-महाराजाओ ने भी इसे अपना शांति धाम बना लिया।''

'पूज्यवर, इस स्थान को कटवप्र नाम कैसे मिला होगा ?' अजितादेवी ने प्रश्न किया।

'यह भी अच्छा प्रश्न है। कट का अर्थ है गुहा, समाधिस्त होने का स्थान। वप्र का अर्थ है गिरि या शैल। पहले ही हम ने जो बताया है वह शिलालेख खुदने तक तो यहाँ सात सौ मुनियों ने समाधि मरण प्राप्त कर लिया था। उसी प्रकार आज तक यहा सहस्रों मुनियो ने समाधि-मरण प्राप्त कर इस स्थान को पुनीत बनाया है। इससे स्पष्ट होता है कि कटवप्र का अर्थ है समाधि मरण प्राप्त कर लेने का स्थान। अतः इस प्रदेश का नाम कटवप्र हो गया है। यहा के 150 शिलालेखों में अधिकांश सल्लेखना-सन्यसन इत्यादि के द्वारा मरण प्राप्त करने वालों का कीर्तिगान बतानेवाले ही शिलालेख हैं।

इन शिलालेखों में आने वाले मुनियों के नाम बता सकते हैं क्या पूज्यवर ?' कालला देवी ने प्रार्थना की।

तब आचार्च ने कहा- 'एक शिला लेख में अरिष्टनेमि मुनि का नाम आता है। उससे विदित होता है कि उन्होने अपने गण का त्याग करके कटवप्रगिरि पर समाधि प्राप्त की है। और एक शिलालेख बताता है कि मारसेन ऋषि ने समाधि

मरण किया है। एक और 'शिला शासन ' में कलतूर नामक मुनि की उग्र तपस्या का विवरण है। कुछ शिलालेखों में वर्णन किया गया है कि नंदिसेन के प्रवर मुनि ने सन्यास स्वीकार करके यहां मरण प्राप्त कर लिया है।'

इन शिला लेखों में संसार की नश्वरता का वर्णन बड़ी सुन्दर उपमाओ से किया गया है। यहां देखिये उस शिला पर ही हम एक शासन फलक देख सकते है। नंदिसेन प्रवरमुनिजी का मार्ग हम सब का भी मार्ग होना चाहिये। कहते हुये आचार्य ने श्रावको की ओर प्रश्नार्थक दृष्टि से देखा। इन सारी बातों को देखने पर स्पष्ट होता है न कि भद्रबाहु मुनि से पुनीत यह प्रदेश जैन धर्मवालों को समाधि मरण के लिये योग्य स्थान है।

'जी हां, यह सचमुच अत्यत पवित्र स्थान है। यह प्रदेश अब भी अत्यत सुन्दर लगता है। इस लिये आस-पास के जनपद, ग्राम इत्यादि संतुष्ट लोगों से धन धान्य, पशुओ से भरे हैं पूज्यवर।'

'यह सही है महामत्री। वहां देखिये वह जो दिखायी पड़ रहा है वह कूगे ब्रह्मदेव स्तंभ है। एक प्रतीति है कि इससे पूर्व युग में इस क्षेत्र पर कोई शत्रु आक्रमण के लिये आते तो इस स्तंभ से एक प्रकार का स्वर निकलता था और ग्रामवासी सब अपने घर एव मदिरो के द्वार बंद करके अपनी रक्षा कर लेते थे। अतः इस स्तंभ का नाम कूगे ब्रह्मदेव स्तंभ हो गया। उस स्तंभ मे खुदवाये हुये शासन-पत्र में गगवाड़ी के पिछले प्रभु दूसरे मारसिंह का वर्णन है। आपको प्रायः यह विदित होगा न चामुण्डय्या जी ?'

'गग साम्राज्य के प्रभु का वर्णन कितना भी करे कम है। धर्म के उत्थान के लिये उन्होंने बहुत परिश्रम किया है।'

'कुछ भी हो पर जैन मुनि सिंहनंदि जी के आशीर्वाद से ही इस गंग-साम्राज्य का उदय हुआ है न आचार्यवर ?' अभिमान से चामुण्डय्या ने पूछा।

'हा, हां यह सत्य है। उसी बात को ध्यान में रखते हुये गंग-प्रभु ने जिन-धर्म की रक्षा के लिये बड़ा परिश्रम किया है। इस स्तंभ के शासन-पत्र में मारसिंह के गुणो का वर्णन किया गया है। 'गंगविद्याधर' 'गंगरिंगं' 'गंगचूड़ामणि' 'गंगवज्र' 'धर्मावतार' इत्यादि नामों से उनका गुणगान करते हुये उनकी दिग्विजयों का वर्णन किया गया है। उन्होंने राज्य के विविध भागों में मदिर, मानस्तंभ इत्यादि निर्माण के द्वारा धर्म-कार्य करके अंत में सिंहासन का त्याग किया तथा बंकापुर में अजितसेन भट्टारक के सान्निध्य में सल्लेखना-व्रत पूर्वक समाधि मरण प्राप्त कर लिया। सत्य ही वे भव्य जीव थे। उनके पुत्र की रक्षा करके सिंहासन पर आप ही ने बिठाया है। आप भी भव्य हैं। उनके आश्रय में सेवा करना सौभाग्य की बात है न चामुण्डय्याजी ?' बात समाप्त करते हुये आचार्य ने प्रश्न किया।

'हां पूज्यवर, इस विषय में मैं भाग्यशाली हूं।

'सायंकाल होने के कारण आचार्य ने कटवप्रगिरि का वर्णन वहीं समाप्त कर दिया। श्रावक अपने-अपने घर चले तथा आचार्यश्री भद्रबाहु गुफा की ओर चले गये।'

9

अगले दिन आचार्यश्री ने धर्मोपदेश सुनने आये जन-समूह को संबोधित करके कटवप्रगिरि की कथा फिर प्रारंभ की।

वहा देखिये वह है गंग वंशज शिवभार प्रभु द्वारा निर्मित चन्द्रप्रभु जिनालय। गंग प्रभु ने इस स्थान को पवित्र मान लिया है अतः कभी-कभी यहां आते है तथा चन्द्रगुप्त, जिनालय के पार्श्वनाथ भगवान की पूजा एवं भद्रबाहु मुनींद्र की पादुकाओं का दर्शन करके जाते हैं। उसी प्रकार आप को भी यहां आए देखकर हमें बड़ी प्रसन्नता हुई। गंग-प्रभु, उनके मंत्री एवं इनके वरिष्ठ अधिकारियों के धर्मप्रेमी होने के कारण ही गगवाड़ी की प्रजा के प्रत्येक कार्य में धर्म स्पष्ट गोचर होता है। 'यथा राजा तथा प्रजा' यह वाक्य गंगवाड़ी के लिये पूर्णरूप से लागू होता है।

'यह सब मुनियों की तपस्या का ही फल है पूज्यवर ?'

'हां चामुण्डय्याजी, मुनियो के शरीर से ही तो इस भूमि की मिट्टी बनी है। लोक-प्रसिद्ध ऋषियों से पुनीत हो गयी है। उसी प्रकार यहा की प्रजा पंचाणुव्रतो का पालन करने वाली है। इनका विश्वास है कि अहिंसा ही परम धर्म है। क्षमा, मार्दव, आकिंचन्य इत्यादि दश-धर्म का अनुसरण निरतर करते आये हैं। कहते-कहते आचार्य ने बात वहीं समाप्त कर दी। सभी श्रावक मुनि के चरण स्पर्श कर अपने-अपने घर चले गये। वहीं बैठे चामुण्डय्या को देखकर आचार्य ने पूछा- 'क्या कोई विशेष बात है चामुण्डय्याजी ?

'पूज्यवर, अम्मा के विषय में कुछ सोचा है आपने ?'

'इसकी चिंता मत करो। आपकी माताजी की भावनाएं उच्च हैं किंतु पौदनपुर के बाहुबली के दर्शन के लिये भगवान कोई न कोई मार्ग दिखाएगा। कुछ प्रतीक्षा करेंगे, अतः और कुछ दिन यहीं रूक जायेंगे। मुनि ने विश्वास दिलाया। चामुण्डय्या वहां से निकले। नेमिचंद्राचार्य भद्रबाहु गुफा की ओर चले गये।

अभी तक माता तथा पत्नी पुत्र को कटवप्रगिरि पर ही देखकर चामुण्डय्या ने पूछा- 'अभी तक शिविर नहीं गये।'

अत्यंत भावुकता से कटवप्रगिरि की महिमा सुनने वाली अम्मा काललादेवी ने अपने पुत्र की बात सुनकर कहा- ठहरो पुत्र, कोई शीघ्रता तो नहीं है। कटवप्रगिरि से उतरने को मन नहीं हो रहा है। चलो पुत्र और एक बार यहां के मंदिर देख लेने की इच्छा हो रही है।

चलो अम्मा ! जैसी आपकी इच्छा। 'चामुण्डय्या ने अपनी माता को प्रत्येक मंदिर का विवरण देते हुये दर्शन कराया। काललादेवी ने इन स्थानों का दर्शन अनेक बार किया था किंतु इस बार उनका अनुभव कुछ भिन्न ही था। फिर भी उनका मन पौदनपुर के बाहुबली के दर्शन की चिंता से भरा हुआ था। उसी चिंता में लीन चामुण्डय्या परिवार शिविर तक पहुंच गया।

10

प्रातः जागते समय चामुण्डय्या तथा काललादेवी के मुख पर प्रसन्नता थी। प्रतिविधियों से निवृत्त होकर दोनों ने जिन-पूजा संपन्न कर ली। अपने पुत्र चामुण्डय्या को आज हंसमुख देखकर काललादेवी ने पूछा- 'क्यों पुत्र, लगता है आज बड़े संतुष्ट हो। क्या कारण है ?'

'अम्मा आज मैने एक स्वप्न देखा।'

'कैसा स्वप्न कुमार ?'

'नेमिनाथ तीर्थंकर की यक्षी कुष्मांडिनीदेवी को मैंने स्वप्न में देखा अम्मा !

'आश्चर्य ! उसके पश्चात् क्या हुआ पुत्र ?'

'ज्ञात हुआ कि पौदनपुर के बाहुबली के चारों ओर कुक्कुट-सर्पों की रक्षा है तथा पंचमकाल में किसी को भी इनके दर्शन नहीं हो सकते। किंतु....

'किंतु क्या पुत्र ?'

'किंतु हम सब की भक्ति से प्रसन्न होकर भगवान बाहुबली यहीं सामने दिखाई पड़ने वाले पहाड़ पर अपना प्रतिरूप दिखायेंगे। उसके लिये कल मुझे शुचिर्भूत होकर इस पहाड़ से दक्षिणाभिमुख खड़े होकर बाण-प्रयोग करना चाहिये। जिस स्थान पर वह बाण लगेगा वहां बाहुबली का एक रेखाचित्र अंकित होगा- इतना कहकर देवी अंतर्धान हो गई अम्मा !'

'अरे पुत्र, निशान्त में मैंने भी यही स्वप्न देखा।'

'यह क्या अम्मा ? हम दोनों के एक जैसे स्वप्नों में कोई विशेषता होगी न ?'

'हां पुत्र, आचार्य से मिलकर हमारे स्वप्नों का विषय बता दें। देखें वे क्या कहते हैं।'

'ठीक है अम्मा, चलिये।'

माता समेत चामुण्डय्या आचार्य से मिलने चले। भद्रबाहु गुफा के पास आचार्य विचार मग्न मुस्काते विराजमान थे। माता-समेत चामुण्डय्या आचार्य के चरण स्पर्श कर बैठ गये।

'सद्धर्म वृद्धिरस्तु ! क्या बात है ? आज इतने शीघ्र आ गये ?' आशीर्वाद देते हुये आचार्य ने प्रश्न किया।

'जी·हा पूज्यवर, अम्मा ने और मैंने आज एक ही प्रकारके स्वप्न देखे हैं।

'एक ही प्रकार के स्वप्न ?'

'जी हा पूज्यवर !'

'आश्चर्य ! हमने भी एक स्वप्न देखा। आपने भी वही स्वप्न देखा होगा न ?'

'विचित्र बात है पूज्यवर ! क्या आप बता सकते हैं आपने क्या स्वप्न देखा ?'

'क्यों नहीं, पौदनपुर के सुवर्ण बाहुबली कुक्कुट सर्पों की रक्षा मे हैं। इस पंचम काल मे वहां कोई भी नहीं जा सकते। किंतु यदि आप कल शुचिभूर्त होकर कटवप्र से दक्षिणाभिमुख खड़े बाण-प्रयोग करे तो वह बाण जहा लगेगा वहां बाहुबली का एक रेखाचित्र अंकित होगा। इन सारी बातों को यक्षी कूष्मांडिनी देवी ने मुझे स्वप्न मे बताया है।

'पूज्यवर ! हमने भी यही स्वप्न देखा है। परमाश्चर्य ! इसका क्या संकेत हो सकता है पूज्यवर ?'

'हम उसी विचार में लीन थे, इतने मे आप आ गये। काललादेवी जैसी माता पाकर आप धन्य है चामुण्डय्या।'

'क्यों पूज्यवर ?'

उनकी अप्रतिम जिन-भक्ति, नीलरागमणि के नेमिनाथ भगवान की अष्टविधार्चना, पौदनापुर के बाहुबली की दर्शनाभिलाषा, इत्यादि सब आप सभीको तीर्थयात्रा पर ले चलने की प्रेरणाएं हैं। उसी कारण तो आप यहा आये है। स्वप्न में नेमिनाथ तीर्थंकर की यक्षी कुष्मांडिनीदेवी के द्वारा सूचना देने का कारण भी आपकी माताजी हैं न ? अतः आप धन्य हैं। आपकी माता महान् भक्त हैं।'

'वह सब आपकी तपस्या एवं आशीर्वाद का ही फल है पूज्यवर।'

विनीत भाव से काललादेवी ने कहा।

'यह स्वप्न शुभ सूचना है चामुण्डय्या। आप कल ही प्रातः शुचिर्भूत होकर वह कार्य करें। आपकी माता की अभिलाषा पूर्ण हो।'

'जो आज्ञा पूज्यवर ।'

अगले दिन चामुण्डय्या शुचिर्भूत होकर जिन पूजा के पश्चात अपनी माता की अभिलाषा की पूर्ति के लिए परिवार-समेत निकले। नेमिचंद्राचार्य के सम्मुख बाण प्रयोग के लिए सन्नद्ध हो गये। चामुण्डय्या के इस कार्य को देखने के लिए कटवप्र पर श्रेष्ठी, श्रावक, श्रीमंत, आबाल-वृद्ध सब एकत्रित थे। सब ओर आनन्दोल्लास फैला हुआ था। चामुण्डय्या ने धनुष्य की प्रत्यंचा पर सुवर्ण-बाण चढ़ाकर पंचणमोकार-मत्र का उच्चारण किया। सब कार्य का निर्विघ्न निर्वाह करनेकी कूष्मांडिनीदेवी से प्रार्थना करके बाण-प्रयोगके लिये सन्नद्ध हो गये।

'गोम्मट, बाण-प्रयोग करो ।'

'जो आज्ञा पूज्यवर।' कहते हुए चामुण्डय्या ने बाण प्रयोग किया। वह बाण सामने वाले उन्नत पर्वत पर लगा। जहां बाण लगा वहीं बाहुबली का एक रेखाचित्र दिखायी पड़ा।

'वह देखिये आचार्यवर'- आनंद विभोर होकर चामुण्डय्या ने कहा। जयघोष की प्रतिध्वनि आकाश में भर गयी। सब लोग आश्चर्यचकित होकर बाहुबली के रेखाचित्र के दर्शन के लिये दौड़ने लगे। जयघोष की ध्वनि दिन भर प्रतिध्वनित होती रही।

नेमिचंद्राचार्य के नयनों से आनन्दाश्रु बह रहा था। काललादेवी अजितादेवी मूक हो गयीं। चामुण्डय्या भाव-विभोर होकर बाहुबली के रेखाचित्र पर दृष्टि लगाये खड़े थे। आचार्य ने ही उन्हें जगाया।

'चामुण्डय्या आप बड़े भाग्यशाली हैं। आप धन्य है। बाहुबली भगवान आपको यहीं दर्शन देंगे। आप मूर्ति निर्माण के कार्य में प्रवृत्त हो जाइये। आचार्य ने आदेश दिया।

'जो आज्ञा पूज्यवर ।'

11

कटवप्रगिरि की यह घटना गंगवाड़ी भर में फैल गयी। यह समाचार राजधानी तलवनपुर पहुंचते ही प्रभु राजमल्ल परिवार-समेत कटवप्रगिरि आये। प्रभु के आगमन का समाचार सुनते ही चामुण्डय्या उनका स्वागत करने अपने शिविर ले आये। चामुण्डय्या के साथ निकले तथा वहां बाहुबली का रेखाचित्र देखकर आश्चर्यचकित रह गये। इस चित्र का सौंदर्य देखकर राजमल्ल ने कहा-

'अमात्यवर, इस रेखा चित्र को मूर्ति का रूप दे दे। इसे एक अद्वितीय कलाकृति बनाइये। इस मूर्ति से अहिंसा धर्म सारे संसार में फैल जाये।'

'मेरी भी इच्छा वही है प्रभु। किंतु....

'किंतु क्या अमात्य ?'

'मूर्ति-निर्माण के लिये मेरे जीवन भर की संपत्ति लगाने को तत्पर हूं। प्रतीत होता है कि यह संपत्ति कम पड़ेगी, अतः उसके लिये आपकी सहायता की आवश्यकता है प्रभु।'

'चामुण्डय्या, मुझे दुख होता है कि आप मुझे समझने में असफल रहे। समस्त गंगराज्य के अधिपति आप हैं। मैं नाम-मात्र का सम्राट हूं, किंतु वास्तव में सम्राट आप हैं। मेरे इस साम्राज्य को आपने ही अर्जित किया है न ? आपके इस लोक कल्याण के महान् कार्य मे सहायक होकर गंग साम्राज्य धन्य हो जायेगा। गंग साम्राज्य का कोष आपका है। अपनी इच्छा के अनुसार इसे व्यय करने का अधिकार आपको है। उसकी चिंता करने की आवश्यकता नहीं। कार्य का शुभारंभ कीजिये।

'मुझ पर आपने जो अभिमान एवं विश्वास रखा है उसके लिये मैं कृतज्ञ हूं सम्राट ! मैं अपनी योजना को कार्यान्वित करना प्रारंभ कर रहा हूं ?'

'निस्संकोच प्रारंभ करें, पर अभी पहले नेमिचंद्राचार्यजी के दर्शन के लिये चलें।'

चामुण्डय्या ने प्रभु राजमल्ल समेत आचार्य के चरण स्पर्श किये। 'सद्धर्म वृद्धिरस्तु' दोनों को आशीर्वाद देते हुये आचार्य ने पूछा-

'क्यों राजमल्ल राजधानी में सब कुशल है न ?'

'हां पूज्यवर, आपकी कृपा से सब कुशल हैं।'

'आचार्य अजितसेन कुशल हैं न ?

'हां पूज्यवर वे सानन्द हैं।'

'अब आपके आगमन का कारण ?'

'चामुण्डय्या की माता की भक्ति से बाहुबलि भगवान को प्रगट करने का पुण्य-प्रसंग प्रस्तुत हुआ है स्वामी !'

'अच्छा क्या इसी चिन्ता में यहां आना हुआ ?'

'सारे संसार का ध्यान ही इस ओर है तो मेरा क्या पूज्यवर। चामुण्डय्या जैसे अमात्य एवं सेनाध्यक्ष बड़े विरल हैं इनकी जिन-भक्ति से ही इस क्षेत्र मे ऐसी अद्वितीय घटना घटी है।'

'सत्य-सत्य ! चामुण्डय्या की ओर देखते हुये आचार्य ने पुनः कहा- 'चामुण्डय्या अब किस कार्य में व्यस्त हैं ?'

'पूज्यवर, मैं एक ऐसे शिल्पी के शोध में हूं जो मेरी कल्पना के बाहुबली को साकार रूप दे सके। इसके लिये मैंने दूर-दूर तक अपने अनुचरों को भेज दिया है।

'क्या ? शिल्पी के शोध के लिये भारतवर्ष भर में अपने अनुचरों को भेज दिया है ?' आश्चर्य से आचार्य ने पूछा- क्या इस कन्नड़ भूमि में ऐसे शिल्पी नहीं हैं ?'

'गगवाडी मे शिल्पियों का क्या आभाव है चामुण्डय्या ? राजमल्ल ने प्रश्न किया।

'ऐसी बात नही है पूज्यवर। मैने बाहुबली की जिस मूर्ति की कल्पना है वह केवल इस कन्नड़ भूमि अथवा गंगवाडी की नहीं, सारे भारतवर्ष की होगी। वह अहिसा तत्व की प्रतीक होना चाहिये। शान्ति का संदेश देते हुये त्याग की सीमा को पारकर, देखनेवाले की दुर्भावनाओं को मिटानेवाली होना चाहिये। युग-युग व्यतीत होने पर भी शांति का यह संदेश प्रतिध्वनित होते रहना चाहिये। है न प्रभु ?' चामुण्डय्या ने अपने विचार व्यक्त किये।

'हां, हा, क्यों नहीं। राजमल्ल ने सम्मति दी।

'साधु-साधु आपकी भावनायें अप्रतिम हैं, उदार हैं। आपके तत्व विश्व तत्व है। आपने संपूर्ण मानव-समाज के हित का ध्यान रखा है। वास्तव में आप जैसे गौरव-पुरुष को पाकर कन्नड़-भूमि धन्य हो गयी है। आचार्य ने अपनी प्रसन्नता प्रकट कर दी।

यह सत्य है पूज्यवर, अमात्यवर ने जो योजना बना ली है, इसके लिये हम संपूर्ण सहयोग देते हैं। राजमल्ल ने भी अपना स्वर मिलाया।

'धर्म की रक्षा एवं प्रजा की रक्षा ही राजधर्म है। उसका पालन आपके वंश ने किया है। वह हमारे राज्य का सौभाग्य है। यह कहकर आचार्य ने चामुण्डय्या से कहा 'चामुण्डय्याजी, हम आपको एक सूचना देना चाहते हैं।

'जो आज्ञा पूज्यवर। सूचना नहीं आदेश दें। मैं विनीत होकर उसका पालन करूंगा।'

आपके इस महान कार्य के लिये प्रेरणा आपकी माताजी हैं। वे प्रतिनित्य नीलरागमणि के नेमिनाथ की पूजा करती हैं। इसी कारण तो यक्षीकूष्मांडिनी ने मार्गदर्शन किया है। अतः प्रथम इस कटवप्रगिरि पर नेमिनाथ जिनालय का निर्माण उचित होगा न ?'

'हां पूज्यवर, अवश्य निर्माण कराऊंगा।'

'प्रभु राजमल्ल को भी हमारी सूचना सम्मत है न ?'

'आपकी सूचना किसको सम्मत नहीं होगी पूज्य ? आपकी एवं महामात्य की योजनाओ के बारे में सूचना देने की सामर्थ्य किसी मे नहीं है। हमारी इच्छा है कि आपके नेतृत्व मे ये सब मंगल-कार्य निर्विघ्न पूर्ण हो। कहते हुये राजमल्ल आचार्य के चरण स्पर्श कर चलने को उद्यत हुये। चामुण्डय्या भी आचार्य के चरण-स्पर्श कर प्रभु राजमल्ल को अपने शिविर ले आये।

भोजन के अनंतर चामुण्डय्या ने जिनदेवण समेत राजमल्ल के पास आकर कहा-

'आपसे एक निवेदन है प्रभु।'

'वह क्या है अमात्य, निस्संकोच कहिये।'

कृपया राज-सेवा से मुझे मुक्त करे प्रभु।

चामुण्डय्या की बात सुनकर राजमल्ल को बड़ा आघात पहुंचा।

'क्यों मंत्रिवर, हमने कौन सा अपराध किया है जो आप राज-सेवा से मुक्त होना चाहते है ?'

'क्षमा करे प्रभु, इसका यह अर्थ नही है कि आपने कुछ किया है। मै वृद्ध हो गया हूं। राज-कार्य में आत्म-कल्याण के लिये समय नहीं मिलता। अब बाहुबली भगवान को साकार रूप देने के लिये मुझे यहीं रहना होगा, अतः मुझे भय है कि राज-सेवा की निष्ठा में कोई त्रुटि न रह जाये। नम्रता से चामुण्डय्याने कहा।

'अमात्यवर, हमें भी ज्ञात है कि आप वृद्ध हो गये हैं। यह भी विदित है कि आपको विश्राम की आवश्यक्ता है, किंतु आपके बिना गंग साम्राज्य जीवित नहीं रह सकता। आप त्यागकर उसे अनाथ बनाना चाहते हैं ?' गद्‌गदित होकर राजमल्ल ने कहा।

'मेरे जीवित रहते गंग साम्राज्य को अनाथ होने नहीं दूंगा प्रभु।'

कहते-कहते चामुण्डय्या चुप हो गये। पुनः राजमल्ल ने ही कहा-

'मंत्रिवर, अभी राजसेवा से मुक्त होने का विचार त्याग दें। आपके किसी भी कार्य में हम बाधा नहीं बनेंगे। आप राजधानी नहीं आते तो भी कोई आपत्ति नही। आवश्यक्ता पड़ने पर आप हमारा मार्गदर्शन करे, यही पर्याप्त है। आपसे एक और अनुरोध है।'

'अनुरोध नहीं आदेश दें प्रभु । मैं अपने प्राणों को भी आपके चरणों में रख दूंगा ।'

'वह हम जानते हैं । अब आप अपने पुत्र जिनदेवण को राजसेवा के लिये हमें दे दें । आपके आगमन तक वे आपके स्थान पर कार्य करते रहेंगे । राजमल्ल के इन वचनों से वहीं खड़ा जिनदेवण रोमांचित हो उठा ।

'प्रभु मैं धन्य हो गया । मैंने अपने पुत्र जिनदेवण को आपकी सेवा में सदा के लिये अर्पित कर दिया है । इसको सही मार्ग पर ले जाने का दायित्व आपका है ।'

'आपके पुत्र के मार्गदर्शक हम बनें ? अस्तु, अब उनको हमारे साथ ले जाने के लिये कोई आपत्ति नहीं है न ?'

'नही प्रभु । इतना कहकर चामुण्डय्या ने अपने पुत्र को अनेक प्रकार से उपदेश देकर राजमल्ल के साथ विदा कर दिया । काललादेवी विचारमग्न हो गयीं कि क्या उनका पौत्र राज्यभार वहन कर सकेगा ? अजितादेवी के नेत्रों में जल भर आया कि इतने शीघ्र पुत्र को राज-सेवा मे भेजना पड़ा । सतोष से विदा लेने पर भी चामुण्डय्या के नेत्रों में भी ममता के कारण जल भर आया ।

12

राजमल्ल का समर्थन प्राप्त करके चामुण्डय्या के अनुचर बाहुबली के रेखाचित्र वाले स्थान के लिये मार्ग बनवाने लगे । अनेक दिन के परिश्रम के पश्चात् मार्ग तैयार हुआ। सब लोग नेमिचद्राचार्य जी के साथ उस मार्ग पर चलकर उस रेखाचित्र को देखकर आये । इसी दिन चामुण्डय्या के घर पहुचते ही उनकी माता ने पूछा-

'पुत्र, मूर्ति-निर्माण के लिये कोई शिल्पी मिला ?'

'योग्य शिल्पी के अन्वेषण के लिये स्वयं मुझे ही जाना पड़ेगा अम्मा ।'

'ऐसी बात है, तो शुभ कार्य मे बिलंब क्यों ? शिल्पी का अन्वेषण अबिलंब करके लाओ पुत्र ।'

माता की आतुरता देखकर चामुण्डय्या को बड़ा हर्ष हुआ । सोचने लगे कि अम्मा की प्रेरणा से ही इस महान कार्य के लिये प्रवृत्त हो रहे हैं । माता ने यदि व्रत न लिया होता तो इस महान-कार्य में प्रवृत्त होने की संभावना नहीं थी । वास्तव में ऐसी अम्मा की कोख से जनम लेकर मैं धन्य हो गया हूं । इस प्रकार सोचते हुये चामुण्डय्या ने माताजी का समाधान किया-

'जो आज्ञा अम्मा, कल ही मैं आचार्यश्री की अनुमति लेकर शिल्पी के अन्वेषण के लिये प्रस्थान करूगा।'

'बड़ा हर्ष हुआ कुमार, ऐसा ही करो।'

अगले दिन चामुण्डय्या नेमिचंद्राचार्य के पास गये तथा प्रणाम करके कहने लगे।

'पूज्यवर, मुझे आशीर्वाद दें कि शिल्प-कला के लिये संपूर्ण जीवन अर्पित करने वाला शिल्पी मुझे मिले। ऐसे ही शिल्पी के अन्वेषण के लिये मैं जा रहा हूं।'

'चामुण्डय्या, आप तपोनिधि अजितसेनाचार्य के शिष्य हैं। इनका आशीर्वाद तो सदैव आपके साथ है। आप उदात्त विचारवाले व्यक्ति हैं। आपके लिये कुछ भी असभव नहीं है। आपका सम्यकत्व आपकी रक्षा करेगा। आपके साथ हमारा आशीर्वाद सदैव है। आपका यह प्रयाण सफल हो, आपका मंगल हो।'

आचार्य का आशीर्वाद प्राप्त कर लेने के पश्चात् चामुण्डय्या मंत्री का राजसी वेष उतारकर सामान्य प्रजा की तरह शिल्पी के अन्वेषण के लिये राज्य में भ्रमण करने लगे। भ्रमण के समय प्रत्येक ग्राम में अनेक शिल्पी उनके सामने आये। किंतु उनमें कोई धन के लोभी थे, कोई प्रतिष्ठा के लोभी थे। अनेक दिनो के भ्रमण के पश्चात भी योग्य शिल्पी नहीं मिला। उसी चिंता में ही चामुण्डय्या का भ्रमण निरतर चलता रहा। एक गांव में तीर्थंकर के दर्शन करके जिनालय के बाहर बैठे ही थे कि समीप ही एक विचित्र व्यक्ति पर उनकी दृष्टि पड़ी। उसके शरीर पर वस्त्र फटे थे, और उसकी दाढ़ी बढ़ी हुई थी। वह ससार के व्यवहारों से दूर, अपने मे लीन, पत्थर के टुकड़ों के बीच मे कुछ करते बैठा था। न जाने क्यो चामुण्डय्या के मन में उस व्यक्ति के प्रति कुतूहल जाग उठा। चामुण्डय्या ने और समीप जाकर देखा। वह एक हाथ में छेनी दूसरे हाथ में हथौड़ी लेकर पत्थर की सुंदर कलाकृति बना रहा था। उसे देखकर चामुण्डय्या को बड़ा संतोष हुआ। उससे वार्तालाप करने हेतु आगे बढ़ ही रहे थे कि किसीका स्वर सुनाई पड़ा।

'अरे भद्र, इधर आइये, उधर मत जाइये। चामुण्डय्या ने उस व्यक्ति कें पास जाकर पूछा-

'क्यों, क्या बात है ?'

'लगता है आप इसके पास जा रहे हैं, वह विक्षिप्त है।'

'क्या वह सत्य ही विक्षिप्त है ? वह सुंदर कलाकृति का निर्माण कर रहा है ?'

'हां, भद्र, वह एक शिल्पी है, महाशिल्पी। इस राज्य के अनेक मंदिरों का निर्माता। किंतु उसकी कथा बड़ी दुखभरी है।'

'विचित्र है। किस ग्राम का है यह ? क्या नाम है ? कोई उसके संबंधी तो होंगे ? वह विक्षिप्त कैसे हो गया ?'

वह मूलतः राष्ट्रकूट राज्य का है भद्र। उसका नाम किसी को भी ज्ञात नहीं। विदित होता है कि कोई उसके संबंधी भी नहीं। कोई एक वृद्धा के पालन मे है। राष्ट्रकूटों एवं कल्याण के चालुक्यों के युद्ध मे इसकी सारी संपत्ति लुट गयी है। चालुक्य के सैनिकों ने निर्दयता से इसकी पत्नी एवं बच्चों की हत्या की है। तभी से इसकी यह विक्षिप्तता बनी हुयी है। फिर भी इसने शिल्प वृत्ति का त्याग नहीं किया है। इस क्षेत्र में आने के पश्चात इसने अनेक मदिरों का निर्माण किया है। शिल्प-कला ही इसके जीवन की सांस बन गयी है। किंतु इसकी इस प्रतिभा को पहचानने वाले नहीं हैं इस समाज में, अतः यह पूर्ण विक्षिप्त हो गया है।'

'तब भी उसने शिल्पवृत्ति का त्याग नही किया, आश्चर्य है।'

'नहीं भद्र, वही तो उसके जीवन का आधार है। इससे कोई भी वार्तालाप नहीं कर सकता। वार्तालाप करने का प्रयत्न करते हैं तो गालियां बकने लगता है एवं पत्थर मारने लगता है, इसीलिये तो मैने आपको सावधान किया।

'यह बात है, तो देखेंगे।'

'मैंने तो आपको समझाया, आगे आपकी इच्छा। जागृत रहना उचित है। इतना कहकर वह व्यक्ति वहां से चला गया। इस शिल्पी को देखकर चामुण्डय्या को बड़ा संतोष हुआ।'

13

चामुण्डय्या यात्रा की थकान से दुर्बल हो गये थे। इस सामान्य वेष में उन्हे देखकर किसी को विश्वास भी नहीं हो सकता था कि वे चामुण्डय्या हैं। अतः इस शिल्पी के पास जाकर बहुत समय तक देखते रहे। शिल्पी अपने कार्य में मग्न था, मुड़कर देखा तक नहीं। चामुण्डय्या ने ही हाथ जोड़कर नमस्कार किया-

'प्रणाम महाशिल्पी।'

शिल्पी ने एक बार मस्तक उठाकर देखा पुनः अपने कार्य में व्यस्त हो गया। चामुण्डय्या ने पुनः नमस्कार किया तो शिल्पी ने क्रोध से पूछा-

'कौन हो तुम ?'

'देव, मैं चामुण्डय्याजी का सेवक हूं।'

'कौन चामुण्डय्या ? कोई भी हो, मुझे क्या ? चले जाओ यहां से।' शिल्पी ने गुर्राते हुये कहा।

चामुण्डय्या निराश नही हुये। वही खड़े पुन. नमस्कार किया तो शिल्पी ने क्रोध से पूछा-'क्या है ?'

'महाशिल्पी, मेरे प्रभु कटवप्रगिरि की अखंडशिला में बाहुबली का विग्रह बनवाना चाहते है।'

'तो मैं क्या करूं ?'

'उन्होने मुझे एक महाशिल्पी की शोध करने के लिये भेजा है।'

'तुम्हारे प्रभु का नाम क्या कहा तुमने ?'

'चामुण्डय्या'

'मेरे कार्य के प्रति वे मुझे क्या पारिश्रमिक दे सकते है।'

'जो आप मागेंगे।'

'जितना सुवर्ण मैं मांगूं, दे सकते है ?'

'सुवर्ण ? महाशिल्पी, जितना आप मांगें।' चामुण्डय्या ने हकलाते हुये कहा 'आप अवश्य मेरे साथ चलिये, आपकी इच्छा पूर्ण होगी।'

'ह.. ह ह. . हा। मेरी इच्छा पूर्ण करेगा ? ह ह हा. . .साधारण वस्तु देने वाले भी मिलते नहीं हैं, यह अपने प्रभु से जो चाहे दिलायेगा। तुम्हें भ्रम तो नहीं ? जाओ, चले जाओ... . मै नहीं आता।'

'मेरे स्वामी ऐसे नहीं है। एक बार आकर तो देखिये महाशिल्पी।'

हो.. .। तुम्हारे प्रभु क्या अत्यत दयालु है ? कुछ भी दे सकते हैं क्या ?'

'हा, महाशिल्पी।'

'महाशय, लोग तो मुझे विक्षिप्त कहते है। मुझे लगता है कि तुम मुझसे बड़े विक्षिप्त हो। चलो, परीक्षा करके तो देखें। यह कहकर शिल्पी चलने को उद्यत हुआ। शिल्पी को लेकर चामुण्डय्या चल पड़े। उनके साथ शिल्पी की माता भी चलीं।

महाशिल्पी के साथ चामुण्डय्या कटवप्र पहुंचते ही नेमिचंद्राचार्य से मिले और नमस्कार किया। आचार्य ने आशीर्वाद दिया-

'सद्धर्म वृद्धिरस्तु। अरे, चामुण्डय्याजी आप कितने बदल गये हैं ? शिल्पी का पता लगा ?'

'जी हां पूज्यवर। वहां देखिये.. .वह जो खड़ा है वह एक महाशिल्पी है।'

'क्या वह शिल्पी है ?'

'जी हा पूज्यवर, वह अत्यंत प्रतिभाशाली कलाकार है। मुझे विश्वास है कि वह मेरी कल्पना के बाहुबली भगवान को पहचान सकेगा।'

'आपका चयन है तो अच्छा ही होगा, किंतु वह कलाकार जैसा तो दिखायी नहीं देता है न ?'

'यह सत्य है पूज्यवर। उसकी कला-प्रतिभा को पहचानने वाला कोई नहीं मिला। लोगों की उपेक्षा से उसकी यह दशा हो गयी है।'

'हा तो ऐसी बात है ? कल से ही कार्य प्रारंभ करा दीजिये।'

'ऐसा ही होगा पूज्यवर।'

कटवप्र में पदार्पण करते ही शिल्पी को मानो स्वर्ग ही मिल गया। उस शिलामय प्रदेश में मूर्तियों का निर्माण करने के लिये उसके हाथ उत्कट हो रहे थे। कटवप्र मे उसके आनंद की सीमा ही नही रही। शिल्पी भावावेश में वहां घूमने लगा। चामुण्डय्या को दूर से आते देखकर उच्च स्वर में उसने पूछा-

'कहां हैं बंधु वह तुम्हारा प्रभु, जो चाहे देने वाला। क्या वह मेरे यहां आते ही भाग गया ?'

चामुण्डय्या ने नहीं कहा कि वह चामुण्डय्या मैं ही हूं। उन्होंने बात टालते हुए कहा-

'नहीं शिल्पी, राज्य के कार्य के लिये राजधानी से बाहर गये हैं। आप अपना कार्य प्रारंभ कर दें। आप जो चाहते हैं वह दिलाने का दायित्व मेरा है।'

'क्यों बंधु, यहां तक ले आकर धोखा तो नहीं दे रहे हो ?'

'नही शिल्पीवर, मागिये, आपको क्या चाहिये।'

'पहले बताओ कि किस मूर्ति का निर्माण करना है। कार्य का विवरण समझे बिना मैं पारिश्रमिक कैसे मांग सकता हूं।'

'वहा देखिये सामने वाले पहाड़ पर बाहुबली रेखाचित्र दिखायी पड़ रहा है न ?'

'हां, एक विशाल आकार है तो वहां।'

'उस अखंड शिला में एक बाहुबली की मूर्ति का निर्माण करना है।'

'हा ठीक है।'

'वह मूर्ति एक साधारण मूर्ति न होकर अहिंसा और त्याग तत्व का प्रतीक हो, विश्व शांति को प्रसारित करने वाली कृति हो। क्षमा उसके मुख पर झलकती हो। युग-युग तक वह शाश्वत रहे.... .चामुण्डय्या अपने विचारों में ही खोकर बातें कर रहे थे। किंतु शिल्पी ने बात काटकर पूछा-

'अरे बंधु.. ..तुम चामुण्डय्या के सेवक हो अथवा.....स्वयं को चामुण्डय्या समझ रहे हो ?'

'नहीं शिल्पीवर, उनके विचार मैंने सुने थे। उसीका वर्णन कर रहा था मैं।'

'तो ठीक है। मूर्ति खोदते समय पत्थर का जितना चूर्ण बनता है उतना ही सुवर्ण दिला सकोगे ?'

यह बात सुनकर चामुण्डय्या कुछ क्षण मौन खड़े रहे। इनके वार्तालाप सुनते दूर खड़े नेमिचंद्राचार्य ने समीप आकर 'हां' कहने के लिये आंखों से संकेत किया। इसके अनुसार चामुण्डय्या ने-

'स्वीकार है शिल्पीवर। आप कार्य प्रारंभ करें।' वचन दिया।

'हां तो ठीक है। मैं कार्य प्रारंभ कर भी दूंगा। किंतु इस बात के लिये साक्षी कौन है ?'

चामुण्डय्या ने कुछ क्षण सोचकर वहीं खड़े आचार्य को ही साक्षी बनाया। मुस्कराते हुये आचार्य ने दोनों को बुलाया तथा कल ही भगवान की वंदना करके कार्य प्रारंभ करने के लिये कहा। तब चामुण्डय्या ने प्रश्न किया-

'पूज्यवर इस शैल पर क्यों न एक जिनालय का निर्माण करें ?'

'हां हां क्यों नहीं ? निर्माण कर सकते है। आचार्य ने सम्मति दी।'

14

अगले दिन महाशिल्पी के साथ आचार्य ने महाशैल की ओर प्रस्थान किया। उनको चामुण्डय्या पथरीले मार्ग से ऊपर तक ले गये। महाशिल्पी ने बाहुबली के चित्र को अनिमेष दृष्टि से देखा। चामुण्डय्या ने आचार्य की सूचना के अनुसार जिनालय के निर्माण के लिये स्थान का निर्धारण किया तथा महाशिल्पी को संपूर्ण कार्य की रूप-रेखा बताई।

आचार्य नेमिचद्र ने एक दिन शुभ मुहूर्त में कार्य प्रारंभ करने का आदेश दिया। उसके अनुसार चामुण्डय्या ने अपनी माता के साथ नेमि-तीर्थंकर की अष्ट विधार्चना की। तत्पश्चात् महाशिल्पीको उन्होंने कार्यारंभ करने की प्रेरणा दी। अमिट उत्साह के साथ महाशिल्पी ने कार्य प्रारभ किया। पहले कटवप्रगिरि पर नेमि तीर्थंकर मंदिर का नक्शा तैयार कर वहां योग्य शिल्पियों को कार्य में लगा दिया। वे स्वय महाशैल के चारों ओर की सिला को काटकर उस स्थान को समतल बनाने में लग गये। मूर्ति वाली सिला को केन्द्र बनाकर तक्षण की योजना बनाने में लग गये। आचार्य एव चामुण्डय्या उस योजना को कार्यरूप में लाने की चिंता मे डूब गये, किंतु महाशिल्पी अपने सह-शिल्पियों के साथ कार्य में रत थे। कभी-कभी कटवप्रगिरि आकर जिनालय के निर्माण कार्य का भी निरीक्षण करते थे। शिल्प-शास्त्र-चतुर नेमिचंद्राचार्य भी सदा शिल्पियों के कार्य की ओर ध्यान देते थे।

कटवप्रगिरि पर नेमि तीर्थंकर के जिनालय का निर्माण-कार्य निरंतर चल रहा था। कार्यारंभ के कुछ ही महीनों मे जिनालय के विविध भाग खड़े हो गये। नेमि-तीर्थंकर की ढाई हाथ ऊंची मूर्ति भी तैयार हो गयी थी। गर्भगृह के द्वार पर प्रतिष्ठापित करने के लिये श्यामवर्ण शिला के सर्वाण्हयक्ष एव कूष्मांडिनीदेवी के कलापूर्ण विग्रह का निर्माण हो गया था। स्वयं महाशिल्पी ने अपने हाथों से जिनबिंब एवं उसके दोनों ओर चामुण्डय्या दंपति के विग्रह का निर्माण किया। इस जिनबिंब में अपनी पूरी कल्पना को उतारने का प्रयास किया। इस विग्रह की सुदरता बढ़ाने के लिये अप्सराओं के भी विग्रह बनाकर इस जिनालय को अत्यंत सुंदर बनाया।

मौन होकर कार्य करनेवाले महाशिल्पी को देखकर नेमिचंद्राचार्य प्रसन्न हो गये। एक दिन चामुण्डय्या को बुलाकर आचार्य ने कहा-

'चामुण्डय्या सत्य ही आपने श्रेष्ठ शिल्पी का अन्वेषण किया है। संदेह नहीं कि ये महाशिल्पी उस बाहुबली का निर्माण अवश्य करेंगे जो आपकी एवं आपकी माता की कल्पना में हैं।'

'यह सब आपके आशीर्वाद का ही फल है पूज्यवर।'

'नहीं, वह सब आपकी माता काललादेवी की भक्ति-भावना और पुण्य का प्रभाव है चामुण्डय्या।'

'आप कुछ भी कहिये पूज्यवर, किंतु.....'कहते-कहते चामुण्डय्या ने विषय बदलने का प्रयास किया। पूज्यवर, जिनालय का निर्माण तो अत्यंत शीघ्र समाप्त हो गया। किंतु सामने वाला पहाड़ तो जैसा का तैसा ही है न ? महाशिल्पी तो निरंतर कार्य मे लगे हुये हैं।'

'धीरज रखिये चामुण्डय्या। सामने वाला पहाड़ दूर से तो ऐसा दिखायी पड़ता है किंतु उसे चढ़ना अत्यंत कठिन है। वहां मूर्ति खोदने के स्थान के चारों ओर चलने फिरने योग्य बना लेने में ही महाशिल्पी को कुछ महीने लग सकते हैं। अतः हमें शीघ्रता नहीं करनी चाहिये। शिल्पी के कार्य को सावधानी से देखते रहना चाहिये।

'जो आज्ञा पूज्यवर, नेमि तीर्थंकर जिनालय का निर्माण कार्य तो समाप्त हो गया है। अतः प्रतिष्ठा महोत्सव का आयोजन करें ?'

'हां ठीक है। राज्य भर में इस समाचार का प्रचार कराइये ताकि जनता में धर्म की प्रवृत्ति बढ़े।'

'जो आज्ञा पूज्यवर।' नमस्कार करके चामुण्डय्या अपने शिविर की ओर चले।

प्रति नित्य काललादेवी एवं अजितादेवी, जिनालय के निर्माण कार्य को ध्यान से देखती रही। जिनालय का निर्माण पूर्ण होने के पश्चात् उस दिन चामुण्डय्या के साथ जिनालय देखने आयी। चामुण्डय्या ने जिनालय का प्रत्येक भाग दिखाकर पूछा-

'क्या आपका मन सतुष्ट हुआ अम्मा ?'

'हां पुत्र। महाशिल्पी की कला-चातुर्य अद्‌भुत है। महाशिल्पी कहा है।

'वे तो सदा महाशैल पर अपने कार्य में मग्न रहते हैं अम्मा। शिला ही उनका जीवन बन गयी है। वे शिला को छोड़कर जी नहीं सकते।

'सत्य है कुमार। इसीलिये उन्होने इतने शीघ्र जिनालय का निर्माण किया। नित्य जब भी हम यहा आते थे तो हमने उनको अपने कार्य में ही मग्न पाया।'

'वह उनकी कर्त्तव्यनिष्ठता है अम्मा।'

'हां पुत्र यह सत्य है। तुम्हारे तथा अजिता की वंदना-प्रतिभाये एव जिनबिब सब कितने मनमोहक बने है देखो।

'हां अम्मा, शिला मे भी उन्होने मदहास भर दिया है। मदहास झलकाती अप्सराओं की प्रतिमायें भी कितनी सुदर बनी हैं न अम्मा ?'

'हां कुमार, नेमि तीर्थंकर का विग्रह तो वीतराग का परमोत्तम प्रतिबिब बन गया है। यक्ष-यक्षिणी के कलापूर्ण विग्रह भी अत्यत आकर्षक बने हैं। कटवप्रगिरि के देवालयों में यह अत्यत सुंदर बन गया है न कुमार ?'

'हां अम्मा।'

'कुमार प्रतिष्ठा महोत्सव की सारी तैयारियां हो गयी है न ?'

'हा अम्मा यह कार्य तो दो सप्ताह में होने वाला है। इस समाचार का प्रचार करने के लिये मै सेवकों को राज्य भर में भेज चुका हूं।'

'आचार्य अजितसेनजी को भी सघ के साथ आने का निमंत्रण भेज दिया है न ?'

'हा अम्मा। प्रभु राजमल्ल ने जिनदेवण के साथ जाकर मुनिसंघ को निमंत्रण दिया है। समाचार मिला है कि आचार्य अपने सघ समेत तलवनपुर से प्रयाण भी कर चुके हैं।'

'यह तो बड़े संतोष का समाचार है कुमार।'

'राज्य के विविध प्रदेशों से जनता के समूह कटवप्रगिरि की ओर आ रहे है। उन सब के लिये ठहरने की भी व्यवस्था की गयी है अम्मा।'

'यह तो बड़ी अच्छी बात है। ऐसा प्रबंध होना चाहिये कि किसी को भी कोई असुविधा न हो।'

'ऐसा ही होगा अम्मा।'

'आचार्य कहां हैं कुमार ? दिखायी नहीं दे रहे हैं ?'

'आज प्रातः ही वे महाशैल पर प्रस्थान कर चुके हैं अम्मा।'

'ऐसी बात है ? उनके उत्साह एवं आशीर्वाद से यह शिल्प कार्य प्रायः शीघ्र ही समाप्त होने के लक्षण दिखायी पड़ रहे हैं न ?'

'हां अम्मा। आचार्य की तपःशक्ति ही ऐसी है। सब से बढ़कर यह भूमि मुनियों का क्षेत्र है न अम्मा ?'

'हां कुमार।'

अनंतर काललादेवी पुत्र तथा पुत्रवधू समेत सारे जिनालयों का दर्शन करके शिविर की ओर चल दीं।

उस दिन कटवप्रगिरि में सर्वत्र जन-समूह ही जन-समूह था। लोगों में अत्यंत उत्साह छलक रहा है। राज्य के विविध प्रदेश से आये मुनि-संघ, विद्वान, कवि, सामंत, जनता सब नेमिनाथ तीर्थंकर के पंचकल्याण-महोत्सव में सम्मिलित हो गये थे। सभी लोग नेमिचंद्राचार्य तथा अजितसेनाचार्य के सम्मुख पंचकल्याण-पूजा-विधान विधिवत् कर रहे थे।

गर्भावतरण-कल्याण से लेकर निर्वाण कल्याण तक की विधियां पांच दिन तक निर्विघ्न सम्पन्न हुईं तथा नेमिनाथ तीर्थंकर की प्रतिष्ठापना विधियां भी संपन्न हो गयीं। पांच दिन तक सर्वत्र आनन्द की लहर दौड़ रही थी। सभी जन चामुण्डय्या का गुणगान कर रहे थे। सभी लोगों के मन में निर्मित हो रहे बाहुबली विग्रह के बारे में उत्सुकता थी तथा सभी के मुख में उसकी ही चर्चा थी। महाशैल जाकर बाहुबली का वह रेखाचित्र देखने के लिये उत्सुक थे, किंतु महाशिल्पी ने आदेश दिया था कि महाशैल पर सभी का प्रवेश निषिद्ध कर दें, अतः महाशैल का मार्ग बंद कर दिया गया था। सभी लोगों के मन में यही एक बात की निराशा थी, अन्यथा सर्वत्र आनंद की लहर दौड़ रही थी।

15

जिनालय का प्रतिष्ठा महोत्सव संपन्न होने के पश्चात् जनता अपने-अपने गाव लौटने लगी। कार्य बाहुल्य के निमित्त राजमल्ल राजधानी लौट गये। सभी मुनिसंघ तो कुछ दिन वहीं रहने का निश्चय कर चुके थे। मुनिवृंद की सेवा करने का एक सुअवसर चामुण्डय्या को प्राप्त हो गया था। सभी लोगों को विदा करने के पश्चात एक दिन चामुण्डय्या कटवप्रगिरि पर भद्रबाहु-पादुका के स्थान पर विचारमग्न होकर अकेले बैठे थे। पादुका का एक दर्शनार्थी इनकी ओर आया तथा नमस्कार करके पूछने लगा-

'क्या आपने मुझे पहचाना नही ?'

चामुण्डय्या ने उन्हें ध्यान से देखते हुये कहा- 'ओह! हो! आप रन्नमय्या हैं। श्री कविरत्न कब पधारे ?' कहते हुये उनको आलिंगन मे भर लिया।

'आपके द्वारा आयोजित पंचकल्याणक महोत्सव के लिये आया था प्रभु।'

'बड़े हर्ष की बात है। इतने दिन आप दिखायी नहीं पड़े ?' कहा थे आप ? आपको कोई असुविधा तो नही हुई ?'

'पूजा शुभारंभ मे आपसे मिलना ही बड़ा कठिन था। आपके द्वारा आयोजित कोई कार्य में किसी को कैसी असुविधा हो सकती है प्रभु ?'

'प्रभु तैलप सकुशल से हैं न ?'

'हां, आपको उन्होंने अभिवदन भेजा है।'

'हर्ष की बात है। आपकी काव्य-रचना कहां तक आयी है ?'

'आपको भी विदित है न ? आपके आश्रय के पश्चात् आपकी सहायता से ही मैं प्रभु तैलप का आस्थान-कवि बन गया हूं।'

'इसमें मेरी क्या सहायता है ? वाग्देवी का भंडार ही आपके अधीन है। आपको अपनी कविता शक्ति ही ने वह स्थान प्रदान किया है। हम दोनो के गुरुवर अजितसेनाचार्य के आशीर्वाद से आपको वह स्थान प्राप्त हो गया।'

'आपके इन अभिमान के वचनों से मैं धन्य हो गया। अस्तु, आप अब तक काव्य-रचना कार्य में क्यों नहीं लगे ?'

'वह पांडित्य मुझ मे कहा है रन्नमय्या ? मुझसे काव्य की रचना क्या होगी ?'

'तर्क, व्याकरण, गणित, छन्द और साहित्य इत्यादि विविध विषयों में आप पंडित है। अजितसेनाचार्य के सम्मुख आपने जिनागम का अध्ययन किया है। आप चाहें तो अनेक कृतियों की रचना कर सकते हैं।'

'अवसर कहा मिलता है रन्नमय्या ? इतने वर्ष राजनीति में था । अब भी कभी-कभी राजनैतिक समस्याएं आती रहती हैं । अब तो बाहुबली के महान विग्रह के निर्माण कार्य में लगा हूं । अन्य कार्य के लिये समय ही नही मिलता है ।'

'सत्य है । प्रस्तुत जो आप कार्य कर रहे हैं वह परम-श्रेष्ठ कार्य है । शताब्दियों तक सत्य, शाति, अहिंसा एवं त्याग इत्यादि महान संदेशों को प्रसारित करने वाले इस बाहुबली के विग्रह का निर्माण कार्य सत्य ही सराहनीय है ।'

इसी प्रकार दोनों घंटों तक बातें करते रहने के पश्चात् भद्रबाहु पादुकाओं को नमस्कार करके अन्य मंदिरों का दर्शन करने चले । अनंतर भद्रबाहु तथा चंद्रगुप्त के विषय वाले शिला-शासन के पार्श्व में आकर बैठ गये । श्री कविरत्न रन्नमय्या ने कहा ।

'कल ही मुझे कल्याण के लिये प्रस्थान करना है प्रभु ।'

'ऐसी भी क्या शीघ्रता है ? अभी कुछ दिन और ठहरकर जाते ?'

'नहीं प्रभु । हमारे प्रभु का आदेश है कि शीघ्र ही लौट जायें ।'

'फिर भेट कब होगी ? कुछ पता नहीं । आज सायंकाल के भोजन के लिये कृपया हमारे यहां पधारिये ।'

'हां, ठीक है प्रभु । 'रन्नमय्या ने निमंत्रण स्वीकार किया । कुछ समय पश्चात् वहा के शिला-शासन पढ़ने लगे । दोनों ने इस शिला-शासन मे वर्णित मुनियो का स्मरण किया तथा वंदनार्पण किया । अनंतर रन्नमय्या ने कहा-

'सदैव यहीं रहने वाले आप सत्य ही बड़े भाग्यशाली हैं । आज यहां हम दोनो का मिलना तथा वार्तालाप करना यह सब भाग्य की बातें हैं प्रभु ?' इस शुभ प्रसंग के स्मरणार्थ यहां शिला-शासन के समीप हम अपने नाम खोदेंगे ।'

'ठीक है । मुनियों के चरण कमल में हमारे नाम भी रहे ।'

कटवप्रगिरि में सल्लेखन-व्रत से देह त्याग किये हुवे मुनियों का स्मरण करके रन्नमय्या ने अपने को कभी आश्रय देने वाले चामुण्डय्या का नाम खोदा 'श्री चामुण्डय्या' । उसी प्रकार चामुण्डय्या ने भी अपने को काव्य का आस्वादन कराने वाले कवि का काव्य नाम 'श्री कवि-रन्न' खोदा । दोनों ने एक दूसरे का आलिंगन कर लिया तो दोनों के नेत्रों से आनंदवाष्प बहने लगे । सायंकाल के भोजन का समय होने के कारण चामुण्डय्या रन्नमय्या को अपने शिविर में ले चले ।

नेमि तीर्थंकर के पंचकल्याण महोत्सव के संदर्भ में कटवप्रगिरि पर जनसागर ही प्रवाहित हो गया था । फिर भी महाशिल्पी अपने कार्य में ऐसे मग्न थे कि मानो वे दूसरे ही लोक मे हों । पूजा का सभारंभ समाप्त होने के पश्चात् चामुण्डय्या महाशिल्पी की सेवा में संपूर्ण रूप से व्यस्त हो गये ।

महाशिल्पी को अन्न-निद्रा की सुधि ही नहीं थी। संसार का ध्यान ही नहीं रहा उन्हें। पूर्ण रूप से अपने कार्य में तल्लीन महाशिल्पी के साथ चामुण्डय्या एक सेवक की भांति कार्य करने लगे। इनके इस उत्साह के परिणामस्वरूप महाशैल पर विशाल प्रांगण का निर्माण हुआ जिसके मध्य में चालीस हाथ ऊंचा, चौबीस हाथ चौड़ा तथा चालीस हाथ वर्तुलाकार एक शिलाखड बन गया। दूर से ही वह शिला-खंड देखकर जन-समूह अपना आश्चर्य प्रकट करने लगा।

बाहुबली का निर्माण कार्य त्वरित गति से होते हुये देखकर भी काललादेवी के मन में बाहुबली भगवान के दर्शन की इच्छा उत्कट हो रही थी। नीलराग मणि के नेमि-तीर्थंकर भगवान की अष्ट विधार्चना करके प्रतिनित्य प्रार्थना करती थीं। कि मूर्ति का निर्माण कार्य शीघ्र ही संपन्न हो।

एक दिन कटवप्रगिरि के नेमि-तीर्थंकर के जिनालय में पूजा करके लौटते समय काललादेवी ने नेमिचद्राचार्य से भेंट की तथा कहा-

'पूज्यवर, लगता है कि बाहुबली विग्रह का निर्माण कार्य उतनी तीव्रगति से नही हो रहा है। मेरे स्वामी के दर्शन कब होंगे ?'

'भद्र, आतुरता से करने वाला कार्य नहीं है वह। शिला में प्राण भर देना कोई सामान्य कार्य थोड़े ही है ? महाशिल्पी को देखिये वे सदैव अपने कार्य मे मग्न रहते हैं। अभी-अभी विग्रह का वह शिला-खंड तैयार हो गया है।'

'अभी कितने दिन लगेगे पूज्यवर ?'

'वह शिल्पी पर निर्भर है। अभी कम से कम तीन-चार वर्ष तो लगेंगे ही।'

'अभी तीन-चार वर्ष ?'

'हां भद्रे, आपके एवं आपके पुत्र के मन मे स्थापित बाहुबली की उस मूर्ति के निर्माण के लिये यदि शिल्पी अपना सपूर्ण जीवन अर्पित करेगा तो भी कम है।

'मुझे इस बात का ध्यान ही नहीं रहा पूज्यवर ?'

'भद्रे, यह महाशिल्पी अद्वितीय कलाकार हैं किसी के कहने से अथवा किसी के दबाव मे आकर कार्य करने वाले नहीं हैं। शिल्पकला ही इनका प्राण है। उन्हें मार्गदर्शन की आवश्यकता नहीं है। वे निस्सदेह आपकी कल्पना के बाहुबली भगवान की प्रतिमा का निर्माण करेंगे। इस कार्य के लिये उन्हें अवसर देना चाहिये न भद्रे ? आप शीघ्रता न करें।'

'जो आज्ञा पूज्यवर, मानसिक उद्वेग के कारण मैंने आपसे पूछा। क्षमा करें।' काललादेवी ने दंडवत नमस्कार किया तो आचार्य ने आशीर्वाद दिया 'सद्धर्म वृद्धिरस्तु।' काललादेवी की यह आतुरता देखकर आचार्य को संतोष हुआ।

16

महाशिल्पी ने शिलाखंड की पूजा की तथा उसकी ऊंचाई भर नसैनी बंधवा ली। अपने मनपसंद कुछ शिल्पियों को लेकर बाहुबली के रेखाचित्र के अनुसार कार्य प्रारंभ किया। शिलाखंड के सभी भागों पर एक साथ कार्य चलने लगा। प्रारंभ में महाशिल्पी मूर्ति के चरण पीठ की रचना करके चरणों की रचना करने लगे। चामुण्डय्या महाशिल्पी के इस कार्य को बड़ी उत्सुकता से देख रहे थे। वह पाषाण शिल्पी के अधीन था। उनकी इच्छानुसार पाषाण रूप धारण कर लेता था। शीघ्र ही पीठ पर दो चरणों का निर्माण हो गया। महाशिल्पी उन चरणों में माथा टेककर फिर अपने कार्य में मग्न हो गये। अन्य शिल्पी बाहुबली भगवान के विविध अंग उपांग खोदने में लगे थे। खिले हुये कमल के आकार का पीठ बन गया था। उसकी रचना देखकर नेमिचंद्राचार्य समेत आये चामुण्डय्या प्रसन्न हो गये। कमल की पंखुड़ियों के मध्य निर्मित चरण देखकर आचार्य आश्चर्यचकित हो गये। चामुण्डय्या ने यह समाचार अपनी माता एवं पत्नी को सुनाया तो वे भी देखने के लिये उत्सुक हो गये किंतु महाशिल्पी ने निषेध कर दिया था।

शिलाखड के शिरोभाग मे मस्तक की सरचना हो रही थी। अन्य भागों का पूर्वकार्य संपन्न होकर मूर्ति का स्वरूप स्पष्ट हो गया था। उसका अंतिम एवं सूक्ष्म कार्य मात्र शेष था। वह कार्य महाशिल्पी बाद में स्वयं करने का निर्णय ले चुके थे। चामुण्डय्या सदैव महाशिल्पी के समीप रहते थे।

स्वयं महाशिल्पी बाहुबली के मस्तक के रचना कार्य में लगे। चतुर्थ काल के प्रथम मोक्षगामी, प्रथम मन्मथ, बाहुबली के सिर के घुंघराले केश महाशिल्पी के कलाचातुर्य से उस शिला मे स्पष्ट हो गये। घुंघराली केशराशि की रचना के लिये महाशिल्पी को महीनो समय लगा। उनका संयम, कार्यतत्परता से निर्मित केशो का सौंदर्य देखकर चामुण्डय्या हर्षित हो गये।

एक दिन चामुण्डय्या से महाशिल्पी ने कहा- 'कहां हैं बंधु तुम्हारे वे चामुण्डय्या ? तुम्हारा वह वचन ज्ञात है न कि बाहुबली के निर्माण के समय गिरने वाले शिला-चूर्ण के समान चामुण्डय्या मुझे सुवर्ण देंगे।'

'ज्ञात है महाशिल्पी। चामुण्डय्या यहां अनेक बार आये तथा आपका कार्य देखकर अपनी प्रसन्नता भी प्रकट की है।'

'मुझे उनकी प्रसन्नता की आवश्यकता नहीं है। सुवर्ण का विषय स्मरण है न ?'

'हां महाशिल्पी।'

'बंधु ? एक बार भी तुमने अपने प्रभु से क्यों नहीं मिलाया ?'

'महाशिल्पी आपतो सदैव कार्य में व्यस्त रहते हैं। बातें भी नहीं करते। भोजन भी नहीं करते। आपके पार्श्व में वह यूं ही रखा रहता है। चामुण्डय्या

अपने समर्थन में कुछ और भी कहना चाहते थे, किंतु महाशिल्पी को कुछ स्मरण हुआ तो शीघ्रतापूर्वक नसैनी से ऊपर चढ़कर अपने कार्य में व्यस्त हो गये।

चामुण्डय्या की उत्सुकता बढ़ गयी कि शिल्पी को किस बात का स्मरण हुआ तथा वे क्या करना चाहते हैं ? शिल्पी मूर्ति के शिरोभाग तक चढ़कर कुछ निरीक्षण करते हुये कार्य मे व्यस्त हो गये। नीचे खड़े चामुण्डय्या की समझ में कुछ नहीं आया। उस दिन शिल्पी ऊपर ही सो गये तथा चामुण्डय्या बाहुबली के चरणों में।

पंछियों के कलरव से चामुण्डय्या की नीद टूट गयी। तब तक शिल्पी अपने कार्य मे व्यस्त हो गये थे। अतः चामुण्डय्या शिल्पी के कार्य में बाधा न डालकर शैल से उतर आये तथा अपने नित्य कर्मों से निवृत्त होकर आचार्य के दर्शन हेतु कटवप्रगिरि चले। आचार्य शास्त्राध्ययन में मग्न थे। कुछ समय के पश्चात् चामुण्डय्या ने नमस्कार किया तो आचार्य ने आशीर्वाद देते हुये पूछा-

'सद्धर्म वृद्धिरस्तु। हां, कार्य कहा तक हो गया चामुण्डय्या ?'

कार्य का संपूर्ण विवरण देते हुये चामुण्डय्या ने शिल्पी से कल हुये वार्तालाप के बारे मे तथा उनके आचरण के बारे मे कहा। मंद मुस्कान से आचार्य का मुख चमकने लगा। महाशिल्पी के प्रत्येक कार्य कटवप्रगिरि से दिखायी पड़ रहे थे। चामुण्डय्याके साथ जाकर आचार्य ने भी अनेक बार मूर्ति का निरीक्षण किया। महाशिल्पी को सदैव अपने कार्य में व्यस्त ही देखा।

बाहुबली के विशाल मस्तक, नेत्र, नाक, अधर, कपोल, कान इत्यादि प्रत्येक अगो का निर्माण धीरे-धीरे हो रहा था। प्रत्येक अग देखने वालों को मुग्ध कर लेते थे। यह दृश्य देखने के लिये जन समूह उमड़ आया। किंतु वे लोग बाहुबली को समीप से देख नही सकते थे। कटवप्रगिरि से ही बाहुबली का सुन्दर मुखड़ा देखकर लोगों को लगा कि धरती पर भगवान स्वयं उतर आये हैं। लोग महाशिल्पी की कला तथा चामुण्डय्या के कार्य का गुणगान करने लगे। बाहुबली के मुख-कमल के सौंदर्य का समाचार गगराज्य के घर-घर में फैल गया।

महाशिल्पी का कार्य अवाध चल रहा था। गर्दन, विशाल भुजायें, विशाल छाती तथा कमर इत्यादि की रचना के लिये शिल्पी अत्यत शान्त भाव से रेखाचित्र का निरीक्षण करते थे। शिला-खंड पर हर बार टांकी रखने से पूर्व कई बार सोचते थे। इसी कारण बाहुबली का निर्माण कार्य मंद गति से चल रहा था। पहले रेखाचित्र के अनुसार आकार बना लेते तत्पश्चात् प्रत्येक अग की रचना बड़ी सूक्ष्म रीति से करते थे। अंतिम रूप देने से पूर्व प्रत्येक कोण से देखकर समाधान कर लेते थे। इस प्रकार मूर्ति का निर्माण कार्य मंद गति से ही क्यों न हो, परंतु व्यवस्थित रूप से चल रहा था। महाशिल्पी का संयम तथा निष्ठा देखकर चामुण्डय्या के हर्ष की सीमा नहीं थी। वे सदैव शिल्पी की सहायता के लिये तत्पर रहते थे।

17

एक दिन शिलाचूर्ण समेटने में मग्न शिल्पी को चामुण्डय्या ने दूर से ही देखा। महाशिल्पी की पालित माता वहा अचानक आ गयी तो शिल्पी ने उत्साह से पुकारा- 'अम्मा।' पुत्र की पुकार सुनकर और समीप पहुंच गयी। शिल्पी ने कहा-

'अम्मा यहां देखो, शिला-चूर्ण की इन थैलियों को देखो।'

'हां पुत्र। वह शिलाचूर्ण थैलियों में क्यों भर रहा है ? मेरी समझ में कुछ नहीं आ रहा है।'

'हां, हां। अब नहीं समझेगी अम्मा तू ? यह केवल शिलाचूर्ण नहीं है अम्मा यह सुवर्ण है सुवर्ण। यह देखो।' कहते हुये शिल्पी ने एक थैली में हाथ डाला किंतु वे हाथ ऊपर उठा नहीं सके। प्रयत्न करने पर भी हाथ उठा नहीं। उनकी शक्ति शिथिल पड़ गयी, हाथ निस्तेज हो गये।

महाशिल्पी चिल्लाते हुये नीचे गिर पड़े। चामुण्डय्या दौड़कर आये। महाशिल्पी मूर्छित हो गये थे। मुख पर पानी छिड़कने से जाग गये। किंतु हाथ तथा पैर पूर्ण शिथिल पड़ गये थे।

'अम्मा....!' करुण-स्वर में चीत्कार किया। उनकी माता यह सब मूक होकर देखती रही। वह समझ नही पा रही थी कि यह क्या हो रहा है। शिल्पी ने फिर पुकारा-'अम्मा....!'

'क्या है पुत्र ?'

'अम्मा, मेरे हाथ-पैर में शक्ति नहीं है। आगे मैं यह शिल्प कार्य नहीं कर सकता। बाहुबली की मूर्ति को पूर्ण करने का भाग्य मेरा नहीं है अम्मा।' महाशिल्पी के नेत्रों से अश्रु-धारा बह निकली। चामुण्डय्या पर बिजली गिरी।

'महाशिल्पी आप क्या कह रहे है ?'

'हां बंधु, यह मेरे पापों का फल है।'

'आपने कौन सा ऐसा पाप किया है जो आपको कोई दड मिले ?'

'वह मुझे मालूम नही है बंधु।'

'क्या तुम्हें अपने पाप का ज्ञान नहीं है ?' उनकी माता ने गरजकर प्रश्न किया।

'अम्मा, कौन सा पाप किया है मैंने ?'

'हां, कला को अपने जीवन की सांस बनाया हुआ था किंतु सुवर्ण के लिये तूने उस कला को बेच दिया है। सुवर्ण, सुवर्ण, सुवर्ण क्यों चाहिये था तुझे सुवर्ण? यहां अपनी कला को बेचने आया है ? तुझे इस शिला चूर्ण के समान सुवर्ण चाहिये था न ?'

'हां अम्मा, हां मै एक पापी हूं। मुझे क्षमा करना।'

'कौन क्षमा करे तुझे? तुझे अपने पाप का फल मिला है, भोगना पड़ेगा।'

'ऐसा मत कहो अम्मा।'

यह वार्तालाप सुनते खड़े चामुण्डय्या ने कहा-'चिंता न करें महाशिल्पी, नेमिचंद्राचार्य को यह संवाद सुनाता हूं। वे इसके लिये कोई न कोई मार्ग दिखायेंगे।

'नहीं चामुण्डय्याजी नहीं। इसके पाप का कोई प्रायश्चित नहीं।' अपनी माता की यह बात सुनकर शिल्पी ने बड़े आश्चर्य से पूछा-

'यह कौन हैं अम्मा, आप इन्हें जानती हैं ?'

'ये ही हैं तुम्हारे प्रभु चामुण्डय्या।'

'ये ही मेरे प्रभु हैं ? क्या ये स्वयं चामुण्डय्या हैं ? पिछले दो वर्षों से मेरे कंधे से कंधा मिलाकर सहायता करने वाले ही चामुण्डय्या हैं। मुझे क्षमा कर दो प्रभु। सत्य ही मैं पापी हूं, मूर्ख हू। अपने प्रभु को पहचान नहीं सका। क्षमा करें. । नमस्कार करने के लिये हाथ उठाने का प्रयत्न किया। उनकी वेदना देखकर चामुण्डय्या ने कहा-

'महाशिल्पी आप कष्ट न करें। पालकी मंगायी है मैंने। उसके आते ही आचार्य के पास चलेंगे।'

'बाहुबली के वास्तविक शिल्पी आप हैं प्रभु। आप वह अपूर्ण कार्य पूर्ण करें तथा मुझे क्षमा करें।'

'आप भावुक न बने महाशिल्पी तनिक धीरज रखिये।'

उतने में पालकी आ गयी तो स्वयं चामुण्डय्या ने ही शिल्पी को उठाकर पालकी में बिठाया। पालकी मे कंधा लगाकर उठाने लगे तो शिल्पी ने मना किया। किंतु चामुण्डय्या स्वयं पालकी उठाकर उन्हें आचार्य के पास ले आये। आचार्य ध्यान में लीन थे। इससे पूर्व ही यह संवाद आचार्य तक पहुंच चुका था। ध्यान टूटते ही सामने बैठे शिल्पी से कहा- 'चिंता न करें शिल्पी, कल तक सब ठीक हो जायेगा।' आचार्य ने अभयदान दिया तो चामुण्डय्या को बड़ा हर्ष हुआ। उन्होंने शिल्पी को उनके शिविर तक पहुंचाकर उनकी सेवा में कुछ सेवकों को लगाया। अनंतर आचार्य के पास लौट आकर पूछा-

'ऐसा क्यों हुआ पूज्यवर ?'

'चिंता न करें चामुण्डय्या। शिल्पी के मन में धन की लोलुपता मिटाने के लिये कूष्मांडिनी देवी ने यह खेल खेला है। कल आप नेमि तीर्थंकर की पूजा अभिषेक करें। पूजा के समय शिल्पी को भी ले आइये। सब ठीक हो जायेगा।'

'जो आज्ञा पूज्यवर।' इसी चिंता से चामुण्डय्या लौट चले। इस घटना से वे भयभीत हो गये थे। आचार्य के अभयदान के पश्चात् भी उनकी चिंता थी कि मूर्ति का निर्माण कार्य कैसे पूर्ण होगा।

अगले दिन कटवप्र के नेमिनाथ जिनालय में आचार्य के सम्मुख पूजा अभिषेक चल रहा था। चामुण्डय्या अपने परिवार समेत वहा उपस्थित थे। महाशिल्पी को भी पालकी पर लाया गया था। वहां एकत्रित सभी लोग पंच णमोकार मंत्र का पठन कर रहे थे। पूजा के समय भी आचार्य ध्यानलीन हो गये थे। पूजा संपन्न होते ही आचार्य ने नेत्र खोले तथा महाशिल्पी के पास जाकर उन पर गंधोदक छिड़काया। उस समय महाशिल्पी को बड़ा संकोच हो रहा था। उनके शरीर में शक्ति का सचार हुआ। हाथ-पैर पहले जैसे ठीक हो गये। महाशिल्पी कुछ समझ नहीं सके। आचार्य के चरणो पर गिरकर गिड़गिड़ाते हुये कहने लगे-

'पूज्यवर मुझे क्षमा कर दीजिये, मुझे क्षमा कर दीजिये।'

शिल्पी के नेत्रों से अश्रुधारा बह निकली। आचार्य के चरण गीले हो गये। आचार्य ने उसे प्रेम से उठा लिया। महाशिल्पी चामुण्डय्या के पास जाकर हाथ जोड़कर कहने लगे-

'मेरे अपराध क्षमा हों प्रभु।'

चामुण्डय्या ने खींचकर उन्हें अपने गले से लगा लिया। उनके आनंद की सीमा नहीं रही। आचार्य जन-समूह को धर्मोपदेश देने लगे। धर्म के विविध स्वरूप का विवरण देते हुये आचार्य ने कहा-' किसी भी धर्म कार्य को धन की इच्छा से अथवा कीर्ति की इच्छा से करें तो वह कार्य निर्विघ्न पूर्ण नहीं हो सकता। शुभ फल की इच्छा से करने वाला सामान्य कार्य भी अमर बन सकता है।' आचार्य का धर्मोपदेश समाप्त होते ही लोग आचार्य की बातों के बारे में सोचते वहीं बैठे थे। आचार्य ने कहा-

'चामुण्डय्या, महाशिल्पी को अब उसके कार्य में लगा दीजिये।' इतना कहकर वे भद्रबाहु गुफा की ओर चले गये। चामुण्डय्या तथा महाशिल्पी दोनों मौन होकर अपने शिविर की ओर लौट गये।

18

अगले दिन सूर्योदय से पूर्व ही महाशिल्पी बाहुबली के सन्निधान में पहुंचे। वे पश्चात्ताप-भाव से संग्रहीत शिलाचूर्ण को फेंककर मूर्ति के निर्माण-कार्य में लगे थे। महाशिल्पी को व्यस्त देखकर चामुण्डय्या लौटना चाहते थे कि उतने में शिल्पी ने कहा-

'प्रभु तनिक रुक जाइये। अब तक मैंने आपके साथ असभ्य रीति से व्यवहार किया है, इसके लिये क्षमा करें प्रभु।'

'महाशिल्पी आप किससे क्षमा मांग रहे हैं ? तथा क्यो मांग रहे है ?' आपकी इस परिस्थिति के लिये जो उत्तरदायी है उन्हे आपसे क्षमा मागनी होगी न ?'

'ऐसी बात नही है प्रभु . . '

'मेरे लिये कृपया प्रभु शब्द का प्रयोग न करें महाशिल्पी। पहले की तरह मुझसे एक वचन मे बातें कीजिये। 'चामुण्डय्या ने महाशिल्पी को समझाने का प्रयत्न किया। 'किंतु उनका प्रयत्न व्यर्थ रहा।

महाशिल्पी मूर्ति को सुदर बनाने में अपनी सुध-बुध खोकर लीन हो गये थे। सभी अगो की रचना पूर्ण होने पर भी शिल्पी को तृप्ति नहीं थी। दोनों ओर बांबी से निकले नाग, दोनो जंघाएं तथा भुजाओ से लिपटी माधवी लताए शिल्पी के कला-चातुर्य की साक्षी दे रही थीं। इनकी रचना करते समय की एकाग्रता तथा सयम के लिये महाशिल्पी सराहनीय थे।

चामुण्डय्या को लग रहा था कि मूर्ति का निर्माण कार्य संपूर्ण हो गया है, किंतु महाशिल्पी की दृष्टि में वह कार्य अभी भी अपूर्ण था, अतः चामुण्डय्या ने शिल्पी से कुछ नहीं कहा।

इसी समय महाशैल पर मूर्ति तक सोपान का भी निर्माण हो गया था। एक सुदंर अखण्ड द्वार भी निर्मित हुआ जिस पर कमलहस्ता श्री लक्ष्मी का विग्रह था। लक्ष्मी के दोनों ओर गजराज उस पर जल बरसा रहे हैं। इन सब के निर्माण के पश्चात् एक दिन आचार्य, चामुण्डय्या के साथ देखने आये। दूर से ही उनको आते देखकर महाशिल्पी उनकी ओर दौड़े, दंडवत नमस्कार हाथजोड़कर खड़े हो गये। आचार्य ने आशीर्वाद दिया 'सद्धर्म वृद्धिरस्तु।' फिर कहा-'महाशिल्पी आपका यह कार्य अद्‌भुत है।'

'यह सब आपके ही आशीर्वाद से हो गया है पूज्यवर।' महाशिल्पी ने विनीत होकर कहा।

फिर महाशिल्पी अपने कार्य में व्यस्त हो गये। मूर्ति के प्रत्येक अंग पर कोई भी ऐसा स्थान नहीं था जिस पर महाशिल्पी की टांकी न लगी हो। मूर्ति

मे मन्मथ का रूप उतारने में शिल्पी सफल हो गये थे । यह कार्य संपूर्ण होने पर एक बार दूर से मूर्ति को देखा । इसका सौंदर्य देखकर वे आश्चर्य चकित रह गये । उसके रूप पर वे स्वयं मुग्ध हो गये । मन में भय पैदा हुआ कि किसी की दृष्टि न लगे । अतः मूर्ति के वामहस्त की तर्जनी छोटी कर दी । तब उनको लगा कि मूर्ति का निर्माण का श्रेय तो अपना है । उसे सूचित करने के लिये मूर्ति के चरणों के पास अपना नाम खोदने के लिये तैयार हुए । तत्क्षण आचार्य की बातों का स्मरण हुआ-'किसी भी धर्म के कार्य को धन की इच्छा से अथवा कीर्ति की इच्छा से करने से वह कार्य निर्विघ्न पूर्ण नहीं हो सकता ।' आचार्य की यह बातें कानों मे गूंजनें लगी । 'हाय, मैं कैसा कार्य करने जा रहा था ।' महाशिल्पी व्यग्र हो गये । कुछ क्षण पश्चात् मूर्ति के पादों के दाहिने भाग में कन्नड़ भाषा मे 'श्री चामुण्डराज माडिसिदं' तथा तामिल भाषा मे 'श्री चामुंडराजन् सेय्ब्बित्तान्' तथा वाम भाग मे मराठी में-'श्री चामुण्डराजे करवीयले ।' वाक्यों को खोदकर फिर दूर से देखा । मूर्ति के पादो के पार्श्व में अपने प्रभु का नाम देखकर बड़े हर्षित हुये । वे सोच रहे थे कि मूर्ति का निर्माण स्वय करने पर भी सदैव पास ही रहकर सहयोग देनेवाले चामुण्डय्या को इसका श्रेय मिलना चाहिये ।

मूर्ति-निर्माण के अपने साधनों को मूर्ति के पादद्वय के मध्य रखकर कुछ क्षण वही बैठ गये । उस दिन चामुण्डय्या किसी कारण वहा नहीं आये थे । मूर्ति निर्माण कार्य संपूर्ण होने की सूचना देने पर मिलने वाले आदर-सत्कार की कल्पना से शिल्पी चिंतित हो गये । यह आदर-सत्कार क्षणिक लगे । आचार्य की बाते कानो मे गूज रही थीं । उन पर चामुण्डय्या का जो अटूट अभिमान एवं विश्वास था, उनके कारण वे वहां से निकल नहीं रहे थे । परंतु कीर्ति, पद, उपाधियां, आदर-सत्कार इत्यादियों से दूर ही रहने का निर्णय ले लिया । अतः कटवप्र से बहुत दूर जाने का निर्णय किया और उठकर खड़े हो गये । कुछ क्षण पश्चात् मूर्ति की ओर चले तथा चरणो पर गिरकर अश्रुतर्पण किया ।

उनका मन भगवान बाहुबली से कहता रहा- 'प्रभु तुम्हारे ही चरणो मे मैं अंतिम सांस लेना चाहता था । किंतु विधि ने प्राय· वह सौभाग्य मुझे नहीं दिया है । मुझे इस स्थान का त्याग करने की अनुमति दे दो भगवान ।' मध्यरात्रि तक वहीं अपने अश्रुओं से भगवान के पाद धोते रहे । अंत में चामुण्डय्या को एक पत्र लिखने लगे ।

'प्रभु, मुझे क्षमा करना । कृपया मेरी खोज करने का प्रयत्न न करें । अपने मन की शांति के लिये मैंने इस स्थान का त्याग किया है । माताश्री काललादेवी को तथा मेरी अम्मा को प्रणाम । मेरी अम्मा की रक्षा का भार कृपया आप उठा लें । मैं एक अज्ञात शिल्पी बनना चाहता हूं । अत· यहां से बहुत दूर जा रहा हूं । आपको अतिम प्रणाम ।'

पत्र समाप्त करके बाहुबली के चरणों के पास रखा। बाहुबली को फिर नमस्कार करके कटवप्र को वहीं से प्रणाम किया। मन में ही आचार्य से क्षमा याचना की। महाशैल से उतरकर महाशिल्पी दिशाहीन प्रयाण के लिये निकले। चलते-चलते वे अनुभव कर रहे थे कि कटवप्र की धरती कुछ कह रही है। कई बार पीछे मुड़कर बाहुबली के दर्शन करते कटवप्र से निकले। दिव्य त्याग का संदेश देते खड़े बाहुबली का निर्माता अदृश्य हो गया। एक महान चेतना ही कहीं लीन हो गयी।

19

अगले दिन चामुण्डय्या, नेमिचंद्राचार्य समेत महाशैल पर पहुंचे। परिपूर्ण मूर्ति को देखकर उनका मन प्रफुल्लित हुआ। तुरत वहां महाशिल्पी की अनुपस्थिति का अनुभव हुआ तो उनका मन उद्वेग से भर गया। उनके नेत्र संपूर्ण महाशैल पर महाशिल्पीको खोजने लगे। वहां की नीरवता से उनका मन व्याकुल हुआ। आचार्य ने भी चारों ओर दृष्टिपात किया किंतु महाशिल्पी का कोई पता नहीं चला। उसी व्याकुलता से चामुण्डय्या ने पुकारा 'शिल्पी...महाशिल्पी. .महाशिल्पी।' उनकी यह पुकार प्रतिध्वनित हो गयी। किंतु कोई उत्तर न पाकर संपूर्ण महाशैल का शोध किया। आचार्य भी सोचने लगे शिल्पी कहां गये होंगे ? चामुण्डय्या ने फिर पुकारा- 'महाशिल्पी... .महाशिल्पी।' सपूर्ण महाशैल इस गर्जन से मानो हिल उठा हो।

'प्रभु, महाशिल्पी को कहां भेज दिया तुमने ?' गिड़गिड़ाते हुये बाहुबली के चरणों पर गिरे। चरणों के मध्य में रखे शिल्पी के साधन तथा पत्र दिखायी पड़े। चामुण्डय्या कांपते हुये हाथों से बड़ी शीघ्रता से पत्र खोलकर पढ़ने लगे। पढ़ते-पढ़ते अचानक चीत्कार किया। आचार्य ..।' तथा मूर्छित हो गये।

चामुण्डय्या की चीत्कार से आश्चर्यचकित आचार्य उनके समीप आ गये तथा उन पर पानी छिड़काने लगे। धीरे-धीरे चामुण्डय्या ने नेत्र खोले। बड़ी दीनता से पूछा-'पूज्यवर, महाशिल्पी कहां हैं ?. . कहां हैं महाशिल्पी ?'

आचार्य ने पत्र लेकर पढ़ा। क्षण भर उनके नेत्र भर आये। वे मौन थे। पुनः अत्यंत करुण स्वर में चामुण्डय्याने पूछा-'मेरे शिल्पी कहां चले गये पूज्यवर ? क्या किया था मैंने ? किस कारण मुझे यह दंड मिला ? क्यों ?' .....वे बच्चों की तरह रोने लगे। उन्हे लगा मूर्ति के पादों के पार्श्व में खोदा हुआ उनका नाम मानों उन्हें कोस रहा हो।

'देखिये आचार्य, महाशिल्पी अपने नाम के बदले मेरा नाम खोदकर मुझे लज्जित करके चले गये हैं।'

'महाशिल्पी का नाम क्या था ?'

'मुझे विदित नहीं है पूज्यवर। उन्होंने बताया भी नहीं है। कई बार मैंने पूछा। हर बार वे टालते ही रहे। कहते थे कि 'शिल्पी' ही मेरा नाम है।'

'उनकी पालित माता को तो ज्ञात होगा ?'

'नहीं पूज्यवर। उनको भी ज्ञात नहीं है। समझ में नही आ रहा है कि उनको कैसे सात्वना दू।'

'हा, यह तो सत्य है। उनका नाम विदित नहीं है। यह भी ज्ञात नहीं कि वे कहां गये होंगे। उनका शोध कैसे कर सकते हैं? आचार्य चिंतित हो गये।

'ऐसी महान मूर्ति का निर्माण करने पर भी महाशिल्पी ने अपना नाम नहीं लिखा मेरे अनुरोध के अनुसार इस मूर्ति का निर्माण उन्होंने किया तथा नाम खोदा मेरा। यह संसार मुझे युग-युग तक स्वार्थी समझेगा पूज्यवर! यह कैसा न्याय है ? शिल्पी ने मुझे किस संकट में डाल दिया।?'

'महाशिल्पी का उद्देश्य यह नहीं था चामुण्डय्या। जिस दिन आप उन्हें ले आये थे आप ही ने तो बताया था कि वे अप्रतिम कलाकार हैं। उनका जीवन केवल कला के लिये ही है। उनके जीवन की श्वास केवल कला है। है न ?'

'हां, पूज्यवर, किंतु ...।'

'किंतु क्या चामुण्डय्या ? क्या किसी कारण महाशिल्पी का मन दुखी हो गया था ? आपने तो उनसे आदर के साथ व्यवहार किया था। उनकी टूटती हुई कला-प्रतिमा को प्रोत्साहन दिया, विकसित होने का अवसर दिया। इसी कारण ही आपकी माता का स्वप्न साकार हुआ, बाहुबली के विग्रह का निर्माण हुआ। मूर्ति की ओर ध्यान से देखिये। आपकी एक-एक कल्पना मूर्ति में उतार दी गयी है।'

'हां पूज्यवर। यह सत्य है।' दुख के भार से कांपते हुये स्वर में चामुण्डय्या ने कहा। 'महाशिल्पी के अभाव में ये सब अपूर्ण है आचार्यवर।' उनका कंठ गद्‌गदित हुआ।

'आप निराश न हों चामुण्डय्या। इस संसारसे जीवका सबंध क्षणिक है। अतः कभी न कभी ये संबंध टूट जाते ही हैं। उसके लिये दुखी नहीं होना चाहिये।'

'वह तो सत्य है आचार्यवर! किंतु मेरा तथा महाशिल्पी का संबंध इतने शीघ्र टूट जायेगा यह मैंने स्वप्न में भी नहीं सोचा था। हम दोनों का संबंध इतना घनिष्ठ बन गया था।'

'यहीं तो मनुष्य भटकता है चामुण्डय्या! कभी भी भावुक नहीं होना चाहिये।'

'क्या हमारी भावनाओं का जीवन में कोई भी मूल्य नहीं है आचार्य ? मनुष्य के प्रेम, स्नेह इत्यादि सब क्या स्वार्थ है ?'

'यह बात नही है चामुण्डय्या । जीवन मे भावनाओं का महत्वपूर्ण स्थान है। किंतु मनुष्य को भावनाओं के वश नही होना चाहिये। भावनाए अपने नियंत्रण में होनी चाहिये। यह प्रेम, स्नेह इत्यादि सब आतरिक होना चाहिये, न कि बाह्य।'

आचार्य के तर्क से प्रभावित होकर चामुण्डय्या ने कहा-'हा, पूज्यवर, यह सत्य है।'

फिर भी महाशिल्पी का स्मरण मंन मे रह-रहकर उठ रहा था। व्यग्र मन से ही दोनों महाशैल से उतर आये। चामुण्डय्या आचार्य को कटवप्रगिरि पहुचाकर अपने शिविर की ओर चले।

उदास होकर लौटे अपने पुत्र को देखकर काललादेवी ने पूछा-

'क्यों पुत्र, तुम्हारा मुख कुम्हलाया हुआ है ?'

'अम्मा, महाशिल्पी ने मूर्ति का निर्माण-कार्य सपूर्ण कर दिया है। कितु .'

'किंतु.....क्या है पुत्र ?'

'किसी को कोई सूचना दिये बिना महाशिल्पी कही चले गये है अम्मा।'

'कहां चले गये है ?'

'ज्ञात नही है अम्मा।' चामुण्डय्या ने व्यग्रता से उत्तर दिया और भोजन किये बिना उदास होकर ही समय व्यतीत किया।

महाशिल्पी की शोध दूर-दूर तक चल रही थी, कितु उनका पता नही चला। चामुण्डय्या बड़े निराश थे। आचार्य के वचन का स्मरण हुआ। शिल्पी की स्मृति मन से निकालना सभव नही हो पा रहा था। उनकी परिस्थिति देखकर नेमिचंद्राचार्य ने आचार्य अजितसेन, प्रभु राजमल्ल तथा जिनदेवण को समाचार पहुचाया। यह समाचार लेकर नेमिचंद्राचार्य का एक सेवक तलवनपुर की ओर शीघ्रता से चला गया।

20

नेमिचंद्राचार्य के शिष्य द्वारा समाचार मिलते ही प्रभु राजमल्ल ने जिनदेवण को भेज दिया। स्वयं अजितसेनाचार्य के संघ के साथ निकलकर कुछ ही दिनों में कटवप्र के निकट पहुंच गये। इससे पूर्व ही जिनदेवण वहा पहुच चुके थे। उनसे प्रभु राजमल्ल तथा आचार्य अजितसेन के आगमन की सूचना पाकर चामुण्डय्या अपना दुख भूलकर स्वागत के लिये सन्नद्ध हो गये। मुनि संघ के कटवप्र पहुंचते ही चामुण्डय्या स्वागत के लिये खड़े थे। कटवप्र की प्रजा ने नेमिचंद्राचार्य के नेतृत्व मे मुनिसंघ का स्वागत किया। चारों ओर जय जयकार की ध्वनि होने लगी। चामुण्डय्या ने मुनिचरणों मे नतमस्तक होकर हर्ष से उनका वन्दन किया। कटवप्र के श्रावकों के घर में मुनियों के लिये आहार व्यवस्था की गयी थी। किंतु आचार्य अजितसेन ने राजमल्ल से कहा-

'हम महाशैल पर जाकर बाहुबली के दर्शन कर आते हैं। आप विश्राम करें।'

'क्यों पूज्यवर, क्या हम भगवान के दर्शन नहीं कर सकते ? इतने परिश्रम से बाहुबली की मूर्ति का निर्माण किया गया है। अतः हम भी भगवान के दर्शन प्रथम करेंगे।'

'हां, हा, क्यों नहीं ? हमने सोचा कि आप कुछ थक गये होंगे, इसलिये हमने ऐसा कहा। भगवान के दर्शन के लिये किसी को भी आपत्ति नहीं हो सकती।' चामुण्डय्या की ओर देखते हुये आचार्य ने कहा।

'किसी को आपत्ति नहीं है पूज्यवर ! किंतु आप सब थके हुये है, अतः कुछ विश्राम करके भोजन के पश्चात् चल सकते है।'

'ऐसा नही होगा, अभी चलेंगे। नेमिचंद्राचार्य की ओर देखते हुये अजितसेनाचार्य ने कहा।'

'जो आपकी इच्छा। नेमिचंद्राचार्य ने सम्मति दी तो महाशैल पर चलने को सभी सन्नद्ध हो गये।'

चामुण्डय्या मुनिवृंद को लेकर महाशैल चले। ऊपर पहुंचने पर बाहुबली के दर्शन से सभी के मुख खिल गये। प्रयाण की थकान मिट गयी। अजितसेनाचार्य मूर्ति को ध्यान से देखते रहे। अनंतर नेमिचंद्राचार्य से कहने लगे-'बाहुबली भगवान का यह विग्रह तो धरती पर स्थित है, परंतु अपने आदर्श सिद्धांतों को आकाश तक पहुंचा रहा है। क्या ऐसा नहीं लगा मुनिवर ?'

संसार के क्रोध के विरोध में खड़े क्षमाशील महामानव की प्रतिष्ठापना है यह आचार्यवर।'

'नहीं, केवल इतना ही नहीं। क्षणभंगुर जीवन को अमरत्व की ओर ले चलने वाला दर्शन इस सुंदर ध्यानासक्त मुख पर झलक रहा है। यह स्निग्ध ध्यानासक्त छवि विकारों पर विजय का संकेत है। 'अजितसेनाचार्य ने अपना विवरण दिया।'

चामुण्डय्या तथा राजमल्ल अत्यंत आदर से मुनियों का वार्तालाप सुन रहे थे।

'शांत प्रसन्न मुख, घुंघराले केश, विशाल नयन, सिंहकटि सब देखने वालों के मन मोह लेते है। ऐसा भव्य गंभीर तथा उज्वल विग्रह अन्यत्र लभ्य नहीं है न ? पूज्यवर यह गोम्मट द्वारा निर्मित गोम्मटेश्वर का अद्‌भुत विग्रह है।' अपना अभिप्राय प्रकट करते हुये गंग भूपति राजमल्ल ने कहा।

'यह सत्य है राजमल्ल नरेश ! आपने इस विग्रह को गोम्मटेश्वर कहा। यह कैसा नूतन नामांकन भूपति ?' अजितसेनाचार्य ने पूछा।

'कोई विशेष बात नहीं है पूज्यवर। हम अपने चामुण्डय्या को प्रेम से गोम्मट कहते हैं न? उनसे मूर्ति का निर्माण हुआ, अतः हमने भगवान को गोम्मटेश्वर कहा।'

'कोई आपत्ति नहीं। गोम्मटेश्वर.. .यह नाम कितना सुंदर है ? गोम्मट का अर्थ मन्मथ है न ? बाहुबली प्रथम मन्मथ हैं। उन्हें गोम्मटेश्वर कहना इस प्रकार से भी समीचीन होगा।' अजितसेनाचार्य ने समर्थन किया तो सबको प्रसन्नता हुई।

'सत्य ही यह विग्रह मन्मथ से भी अधिक सुंदर है। प्रत्येक अंगों का निर्माण बड़े ध्यान से, संयम से किया गया है। विशाल-वक्ष, अरविद नेत्र, मुख पर मदहास यह सब मूर्ति की सुंदरता को अधिक सुदर बनाने में सफल हो गये हैं, इतना ही नहीं मूर्ति को दोनों ओर बांबी से निकलते सर्प तथा भुजाओ पर लिपटी हुई माधवी लता भी मूर्ति की सुदरता की वृद्धि करने वाले हैं। यह दृश्य इतना नयनाकर्षक बन गया है कि देखने वाले मुग्ध होकर अपने को भी भूल जाते हैं।' संघ के किसी मुनि ने वर्णन किया।

'हां, हां, यह घुंघराले केश वाला नयनाकर्ष उन्नत मस्तक, आत्मलीन दृष्टि इत्यादि सबके मन को आकर्षित कर लेते हैं। ऐसा लगता है कि वह ध्यानासक्त शांत मुख मानो संसार के संघर्ष को देखकर मंदस्मित हो गया हो। यह भव्य, गंभीर, विग्रह सांसारिक संकट से दूर तपस्या-मग्न आदर्श तपस्वी का संकेत बन गया है।' नेमिचंद्राचार्य ने जोड़ दिया।

वहा एकत्रित सभी जन अपनी-अपनी भावनाओं को अपनी ही रीति से व्यक्त कर रहे थे। यह सब सुनते-सुनते चामुण्डय्या का मन वेदना से भर गया कि यह

सब सुनने के लिये महाशिल्पी नहीं हैं। नेत्र भर आये। यह देखकर अजितसेनाचार्य ने उन्हें बुलाया-

'यहां आना गोम्मट।' चामुण्डय्या उनके पास गये तो आचार्य ने पूछा-

'यहां सभी हर्षित हो रहे हैं किंतु आप क्यों दुखी हैं ?'

'इस मूर्ति का निर्माता महाशिल्पी नहीं है पूज्यवर। इनके स्मरण से दुखी हुआ। उनके शोध के लिये किये गये सारे प्रयत्न व्यर्थ हो गये। उनका नाम भी हमें ज्ञात नहीं है।'

'महान कलाकार अथवा महान संस्कृति सेवक कभी भी कीर्ति अथवा धन की इच्छा से कार्य नहीं करते। शिल्पी का नाम आज हमें ज्ञात नहीं तो क्या हुआ ? युगों तक वे महाशिल्पी के नाम से पहचाने जायेंगे। शिल्पी ने एक पाठ पढ़ाया है। उन्होंने दिखाया है कि हमारे प्रत्येक कार्य इच्छा रहित होने चाहिये। अब उनकी चिंता त्याग कर आगे की सोचो। मूर्ति की प्रतिष्ठापना महोत्सव का आयोजन करेंगे न ?' गंभीर होकर आचार्य ने प्रश्न किया।

'क्षमा प्रार्थी हूं पूज्यवर, आपके आदेशानुसार करने के लिये मैं सन्नद्ध हू।' गद्‌गदित कंठ से चामुण्डय्या ने कहा।'

'तो मूर्ति की प्रतिष्ठापना महोत्सव तथा महामस्तकाभिषेक का आयोजन करो। जन-समुदाय को दर्शन कर लेने का अवसर प्रदान करो।'

'जो आज्ञा पूज्यवर।'

चामुण्डय्या की इस सम्मति से संपूर्ण मुनिवृद तथा अन्य जन एक ही कंठ से जय-जयकार करने लगे।' बाहुबली की जय हो, गोम्मटेश्वर की जय हो।'

अगले दिन अजितसेनाचार्य के मुनिवृंद का दर्शन करने के लिये गंगवाडी के विविध भाग से असंख्य लोग कटवप्र आ गये थे। चामुण्डय्या भी सामान्य हो गये थे। अतः मूर्ति की प्रतिष्ठापना महोत्सव के बारे में प्रभु राजमल्ल से उन्होंने चर्चा की। एक निर्णय के साथ वे आचार्य के सन्निधान में आये थे। प्रभु राजमल्ल भी अपने परिवार समेत आये। उस दिन आचार्य द्वय से धर्मोपदेश सुनकर जन-समूह आनंदित हुआ। मूर्ति-प्रतिष्ठापना तथा महामस्तकाभिषेक करने की चामुण्डय्या की इच्छा से प्रभु राजमल्ल बड़े प्रसन्न हो गये थे। मुनिचरणों में पुष्कल संपत्ति रखकर चामुण्डय्या से कहने लगे-

'चामुण्डय्या, गंग साम्राज्य के अधिपति तो हम हैं, किंतु वास्तविक अधिपति आप हैं। प्रजा के हृदय के अधिपति है आप। गंगवाड़ी आप जैसे पुत्र को पाकर धन्य हो गयी है। आप तथा आपके पूर्वजों ने गंगवाड़ी की जो सेवा की है, यह राज्य सदैव उसका स्मरण रखेगा। अपनी माता की प्रेरणा से इस मूर्ति का निर्माण करके आपने गंगवाडी को ही नहीं संपूर्ण भारतवर्ष को बाहुबली का दिव्य-संदेश

प्रदान किया है । इस अद्‌भुत कलाकृति के लिये आपका सम्मान कितना भी करें कम है । अतः इस जन-समूह के सम्मुख हम आपको 'राय'-उपाधि प्रदान करते है । आप यह उपाधि तथा यह संपत्ति स्वीकार करें ।'

राजमल्ल के इस अचानक व्यवहार से चामुण्डय्या दुविधा में पड़े । वे समझ नहीं सके कि क्या करना चाहिये । एक क्षण के मौन के पश्चात् मुनि की वंदना करके कहने लगे-

'गंगवाड़ी के प्रभु तथा प्रजा ने सदैव मुझे अभिमान तथा गौरव से देखा है । उपाधि तथा संपत्ति से मुझे अनुग्रहीत किया है । मैं भी एक सामान्य प्रजा ही तो हूं । मैंने जो भी कार्य किया है वह प्रभु तथा गगवाड़ी की प्रजा के आशीर्वाद का फल है । आप सबकी कृपा इस उपाधि तथा संपत्ति से बड़ी है । यह संपत्ति भी प्रजा के कल्याण-कार्य मे ही लगेगी । यह सारी बातें विनीत भाव से कहकर वे बैठ गये ।

आचार्य के आशीर्वाद के साथ चामुण्डय्या ने उपाधि तथा संपत्ति ग्रहण की । उन्होंने भावविभोर होकर जन-समूह, प्रभु राजमल्ल तथा मुनिवृंद की ओर हाथ जोड़कर कृतज्ञता ज्ञापित की ।

21

गुरुवर अजितसेनाचार्य के उपदेश का तथा प्रभु राजमल्ल के प्रोत्साहन का चामुण्डय्या पर गहरा प्रभाव पड़ा । बाहुबली प्रतिष्ठा-महोत्सव की तैयारियां होने लगीं । गंगवाड़ी की राजधानी तलवनपुर से इस कार्य के लिये आवश्यक सामग्री तथा जन-शक्ति राजमल्ल ने भेज दी । छः मास के अदर ही मूर्ति की प्रतिष्ठा संपन्न करने का निर्णय लिया गया ।

बाहुबली के पीछे आधार का निर्माण होने लगा । मूर्ति के चारों तरफ प्रांगण समतल बनाया गया । महामस्तकाभिषेक में भाग लेने के लिये सहस्रों की संख्या में प्रजा के एकत्रित होने की संभावना थी । कटवप्र के नीचे सभी भागों मे आवास तथा जल का प्रबंध होने लगा । आर्यावर्त के विविध प्रदेशों, विविध भाषी लोगों के आगमन की भी संभावना थी । उनकी व्यवस्था की दृष्टि से सेवकों को प्रशिक्षण दिया गया । इस महोत्सव में सम्राट, सामंत, श्रेष्ठी, जमींदार इत्यादि अपने परिवार समेत भाग लेने वाले थे, अतः सभी वर्ग के लोगों के लिये आवास का उचित प्रबंध किया गया । मुनियो के लिये मुनि-कुटीर बन गये । धार्मिक कार्यक्रम के लिये मंच का निर्माण हो गया ।

इस प्रकार चामुण्डय्या ने महोत्सव की पूरी तैयारियां करके भारतवर्ष के विविध भाग में अपने दूत भेजकर मूर्ति-प्रतिष्ठा का प्रचार व्यवस्थित रूप से कराया। यह समाचार मिलते ही लोग विविध प्रदेशों से आने लगे। महामस्तकाभिषेक के दो सप्ताह पूर्व ही प्रभु राजमल्ल जिनदेवण के साथ कटवप्र आकर चामुण्डय्या की सहायता करने लगे। अब चामुण्डय्या पूर्ण रूप से इस समारंभ के कार्यों में सलग्न हो गये।

पूजा समारभ का समय समीप आते-आते बीस सहस्त्र से भी अधिक लोग कटवप्र में एकत्रित हो गये थे। विविध भाषा के लोग विविध प्रदेशों से आये हुये थे।

पूजा के दिन महाशैल का आरोहण करने के लिये प्रातःकाल से पूर्व ही लोग सन्नद्ध थे। स्त्री-पुरुष, बच्चे सब आकर्षक वस्त्र धारण करके विविध कुभों में क्षीर, शुद्ध-जल, लेकर शैल का आरोहण करने का दृश्य मनोहर था। प्रातः दूसरे प्रहर तक मूर्ति के सम्मुख वाला प्रांगण संपूर्ण भर गया। मूर्ति के सम्मुख चालीस वर्ग हाथ प्रागण में धान फैलाकर उस पर शुद्ध जल से भरे १००८ सुवर्ण कलश रखे गये थे। अट्टाल पर मूर्ति प्रतिष्ठापना विधान तथा महामस्तकाभिषेक विधान की सामग्रियां रखी गयी थीं। मूर्ति के वाम भाग में गणमान्य व्यक्ति तथा दाहिने भाग में मुनि वृद आसीन थे। इस समारंभ का नेतृत्व अजितसेनाचार्य ने ले लिया था। अतःवे नीचे तथा नेमिचंद्राचार्य अट्टाल पर रहकर मार्गदर्शन कर रहे थे।

भगवान बाहुबली की प्रतिष्ठापना का विधान प्रारभ हो गया। प्रारभ में बाहुबली को अरिहंत बनाने की विधि के निमित्त मूर्ति पर श्रीगंध का लेप किया गया। प्रतिष्ठापना का अत्यंत प्रधान विधान नयनोन्मीलन कार्य दोनो आचार्यों ने सम्पन्न किया। बाहुबली को केवलज्ञान प्राप्त होने के संकेत में वाद्यवादन के साथ महामस्ताभिषेक प्रारंभ हुआ।

बाहुबली के मस्तक के पास मंच पर नेमिचंद्राचार्य के साथ प्रभु राजमल्ल, चामुण्डराय इत्यादि अनेक पुरोहितों समेत हाथ में सुवर्ण कलश लेकर सन्नद्ध खड़े थे। भूमि पर मूर्ति के पार्श्व में खड़े अजितासेनाचार्य के संकेत करते ही बाहुबली के मस्तक पर अभिषेक प्रारंभ हुआ। वाद्य-घोष कानों में गूंज गया। अनेक पुरोहित एक साथ मंत्रोच्चारण करने लगे। जन समुदाय पंच णमोकार का पठन कर रहा था।

चामुण्डराय की माता काललादेवी अत्यंत भावुक होकर अपने स्वप्न की साकार मूर्ति देख रहीं थीं। भक्त-समूह विविध रीति से जय-जयकार कर रहा था। दक्षिणोत्तर की भाषाओंके मिलाप से एक नयी ही ध्वनि पैदा हो गयी थी।

1008 कलशों के अभिषेक के पश्चात् विविध पदार्थों का अभिषेक प्रारंभ हुआ। जलाभिषेक, क्षीराभिषेक करके चामुण्डराय नीचे उतर आये। अपने व्यवस्थित

प्रबंध देखकर उन्हें तृप्ति मिली तो अभिषेक देखने लगे। ऊपर ले जाते हुये क्षीर-कलश देखते-देखते उनके मन के एक कोने में गर्व का अनुभव हुआ। एक विचार पैदा हुआ कि इस महान् मूर्ति के निर्माण का श्रेय अपना है। सम्राटो से भी असंभव कार्य अपने द्वारा संपन्न हो गया है। सामान्य मनुष्य से यह कार्य सभव नहीं। एक प्रकार से उनके मन में अहंकार पैदा हो गया।

क्षीराभिषेक प्रारभ हुआ। पुरोहित, भक्त सब एक के पश्चात् एक कलश उठाकर क्षीराभिषेक करने लगे। किंतु वह क्षीर बाहुबली की कटि तक भी नही उतर सका। दर्शकों को बड़ा आश्चर्य हुआ। अभिषेक के लिये लाया गया सारा क्षीर समाप्त हो गया। सारे कलश रिक्त हो गये। चामुण्डराय का अहंकार अपने आप उतर गया। वे अजितासेनाचार्य के पास दौड़े, व्यग्रता से पूछा-

'आचार्य, यह क्या हो रहा है ?'

'धीरज रखो गोम्मट। तुम्हे सब कुछ अपने आप ज्ञात होगा।' आचार्य ने सांत्वना दी। उतने में एक वृद्धा एक छोटे श्रीफल के छिलके में क्षीर लेकर आयी, तथा अभिषेक करने की अपनी अभिलाषा प्रकट की, किंतु वहां के कर्मचारियों ने उसे रोका। वृद्धा ने पुनः प्रार्थना की-

'मुझे जाने दीजिये, मैं भी क्षीराभिषेक करना चाहती हूं।'

'चामुण्डाराय के द्वारा इतना क्षीर उपलब्ध कराया गया, किंतु अभिषेक अभी अपूर्ण ही रह गया है। तुम्हारे इस छिलके में कितना क्षीर होगा जो अभिषेक करना चाहती हो। चलो अम्मा, हटो, मार्ग छोड़ो।' कर्मचारी उसे पीछे हटाने लगे।

आचार्य ने देखा तो चामुण्डराय से कहा-'वह वृद्धा अभिषेक करना चाहती है, गोम्मट, उन्हें आदर के साथ अदर ले आओ।'

'जो आज्ञा पूज्यवर।' यह कहकर चामुण्डराय वृद्धाको सहारा देते चले। वृद्धा ने मुनि को दडवत नमस्कार किया तथा बाहुबली की वंदना की। अनतर अभिषेक करने के लिये छिलके में लाया हुआ अपना क्षीर लेकर बाहुबली के मस्तक पर अभिषेक करते ही वह क्षीर वर्धित होने लगा। प्रवाहित होकर बहने लगा, तथा महाशैल के नीचे एक सरोवर बन गया। आचार्य ने चामुण्डराय को देखा। चामुण्डराय नतमस्तक हो गये। अभिषेक का कार्य चलता ही रहा। हल्दी, कुकुम, चंदन इत्यादि का अभिषेक करते समय मूर्ति का वर्ण अद्वितीय बनता चला गया। सुवर्ण-रजत के पुष्प तथा नवरत्नों के अभिषेक के पश्चात् आरती के साथ पूजा संपन्न हो गयी।

एकत्रित जन-समूह ने गध प्रसाद ग्रहण करके बाहुबली की वंदना की। तत्पश्चात् सभी वहा से चलने लगे, परंतु चामुण्डराय इस वृद्धा का शोध कर रहे थे। प्रत्येक व्यक्ति से पूछा, फिर भी वृद्धा का कहीं पता नहीं चला। व्यग्र होकर

चामुण्डराय अजितसेनाचार्य के पास गये । कुछ क्षण मौन के पश्चात् चामुण्डराय ने प्रश्न किया-'पूज्यवर, वह वृद्धा कहां है ? इसने मेरे अंदर उत्पन्न अहंकार का नाश करके पूजा कार्य संपन्न किया है । कहां है वह पूज्यवर ?'

मंदहास करते हुये आचार्य ने कहा-'वह कैसे मिल सकती है गोम्मट ? वह वृद्धा कोई और नहीं, स्वयं यक्षि कूष्मांडिनीदेवी से भेजी गयी वृद्धा होगी ।'

'बड़े आश्चर्य की बात है आचार्य । अपने मन में उदित अहंकार के लिये मैं लज्जित हूं । मैं क्षमा-प्रार्थी हूं आचार्य, मुझे क्षमा प्रदान करें ।'

तुम्हारा कोई दोष नहीं है गोम्मट । मानव-सुलभ भावना ही तुम्हारे मन में पैदा हो गयी थी । इस महान मूर्ति का निर्माण तो तुमने ही किया है न ? तुम्हारे मन में ऐसी भावनाओं का उदय होना स्वाभाविक ही है । तुम्हारे द्वारा निर्मित भगवान बाहुबली को भी केवलज्ञान शीघ्र प्राप्त नहीं हो सका । तुम्हें इसका कारण ज्ञात है ? तब तुम्हारा क्या दोष हो सकता है ? कुष्मांडिनी देवी ने इसके द्वारा यह दिखाया है कि पूजा के लिये विनय तथा भक्ति की आवश्यकता होती है । निश्चिंत हो जाओ ।' आचार्य ने चामुण्डराय को सात्वना दी ।

22

मूर्ति की प्रतिष्ठापना तथा महामस्ताभिषेक सपन्न होने के पश्चात् भी लोग कटवप्र आते-जाते रहे । प्रभु राजमल्ल तलवनपुर लौट गये थे । अजितसेनाचार्य ने अपने सघ के साथ कुछ दिन और वहीं रहने की इच्छा प्रकट की । चामुण्डराय ने अपनी माता का स्वप्न पूर्ण किया था । उनकी जीवन-दृष्टि ही बदल गयी थी । अब वे कटवप्र में ही वास करने के बारे में सोच रहे थे । माता तथा पत्नी भी उनके साथ ही रहना चाहती थीं ।

एक दिन चामुण्डराय अपने शिविर मे बैठे थे । कटवप्र आगमन से लेकर अब तक की सारी घटनायें इनके मस्तिष्क में उभर रही थीं । मूर्ति निर्माण से लेकर इसकी प्रतिष्ठापना तक की प्रत्येक घटनाओं पर वे सोच रहे थे । इन सब कार्यों के लिये पूर्ण रूप से उनकी माता की ही प्रेरणा थी । माता तथा आचार्य के स्वप्न, शिल्पी का अन्वेषण, नेमि तीर्थंकर का पंच-कल्याणक महोत्सव, महाशिल्पी की दुर्घटना, मूर्ति प्रतिष्ठापना कार्य, महामस्ताभिषेक, समारंभ में अपना गर्वभंग इत्यादि अनेक दृश्य उनके मस्तिष्क पर अंकित होते गये । इनमे महाशिल्पी की दुर्घटना तथा अपने ही गर्वभंग की घटना का स्मरण होते ही उनका मन कांप उठा । जीवन के बारे में मन में तिरस्कार पैदा हुआ । उन्हें लगा कि इसी तरह केवल सोचते रहने से मन न जाने कहां कहां भटक सकता है । अतः वे नेमिचंद्राचार्य के पास दौड़े ।

शीघ्रता से आकर वंदना करके बैठे चामुण्डराय को आशीर्वाद देते हुये नेमिचंद्राचार्य ने पूछा-'गोम्मट, बाहुबली के दर्शन करने हमारे साथ चलोगे ?'

'हां पूज्यवर, चलिये ।' दोनों बाहुबली के सन्निधान तक चलकर वंदना करके वही कुछ देर विराजमान हो गये । अनेक विषयो की चर्चा हो गयी । उस चर्चा के संदर्भ में चामुण्डराय ने कहा-'पूज्यवर, अभी कुछ और कार्य करने की इच्छा है ।'

'हर्ष की बात है । कौन सा कार्य करने की इच्छा है ?'

'मूर्ति की महानता सदैव रहना चाहिये न पूज्यवर ?'

'हां.....।'

'तब रात्रि के समय भी मूर्ति दृष्टिगोचर होनी चाहिये ?'

'हां.. .....किंतु.... ....।'

'इसके लिये मैंने एक योजना की है पूज्यवर ।'

'वह कौन सी योजना है ? हमे विस्तार से बताओ ।'

'भगवान बाहुबली के सम्मुख एक ब्रह्मदेव-स्तंभ का निर्माण, उस पर रत्न-खचित मुकुटधारी ब्रह्मयक्ष की स्थापना तथा उस मुकुट के रत्नो की काति से बाहुबली के चरणों को प्रकाशमान करना ।'

'सत्य ही यह एक उत्तम योजना है ।'.... आगे ?'

'अखंड-शिला द्वार के मार्ग पर एक और ब्रह्मदेव-स्तंभ की स्थापना करना चाहता हूं । यह त्याग का सदेश देने वाला स्तंभ होगा । भविष्य मे यहां आने वाले यात्रार्थियो में दान-धर्म की भावना जागृत करना ही इस स्तभ का उद्देश्य है ।'

'यह भी एक श्रेष्ठ कार्य है ।' .. ..फिर ?'

'यहा एक ग्राम का निर्माण करना चाहता हूं ताकि यहा आने वाले भक्तों को सुविधा तथा प्रेरणा मिल सके ।'

'आपका यह उद्देश्य तो उत्तम है, किंतु सुविधाओं के लिये ग्राम का निर्माण हुआ तो वह यहा आने वाले भक्तजन का सहायक नही होगा । यह शांत वातावरण निर्जन होने पर ही शाश्वत रह सकता है । आत्म-कल्याण की इच्छा से जो यहां आते हैं वे तो अपने आप यहां वास करते हैं । यदि आप ग्राम का निर्माण करते है तो वह धार्मिक मनोवृत्ति को अवसर नहीं देगा । सब का त्याग करके यहां आने वालो का मात्र कल्याण होगा । यहां आने पर भी इच्छा-ग्रस्त रहे तो लाभ?' उनका आत्म-कल्याण कैसे होगा ?' आचार्य ने समझाते हुये कहा-'ये हमारे विचार है । आप अपनी इच्छा के अनुसार कर सकते हैं । और कोई योजना हैं आपकी?'

कुछ समय की चर्चा के पश्चात् नेमिचंद्राचार्य ने चामुण्डराय के तर्क सुनकर सहमति दी । बाहुबली की वंदना करके आचार्य के साथ चामुण्डराय महाशैल से उतरने लगे ।

23

चामुण्डराय ने भगवान बाहुबली के सम्मुख ब्रह्मदेव स्तंभ की स्थापना की। इसके साथ ही त्याग के ब्रह्मस्तंभ का भी निर्माण हो गया। इस प्रकार एक के पश्चात् एक योजनायें कार्यान्वित होने लगीं। धार्मिक कार्य के अनुकूल एक छोटे से ग्राम का निर्माण होने लगा। धर्मपीठ की रचना के रूप में एक मठ की स्थापना हो गयी। इन सब कार्योंके लिये अजितसेनाचार्य तथा नेमिचंद्राचार्य मार्गदर्शक थे।

बाहुबली के सम्मुख वाले ब्रह्मस्तंभ पर प्रतिष्ठापित ब्रह्मदेव के मुकुटधारण महोत्सव इत्यादि के लिये प्रभु राजमल्ल को निमत्रण भेजा गया। तत्पश्चात् समस्त प्रजा को भी निमंत्रित किया गया।

सभारंभ के दिन चामुण्डराय की इच्छा के अनुसार अजितसेनाचार्य के नेतृत्व में ब्रह्मस्तंभ के ब्रह्म-यक्ष को रत्न-खचित मुकुट पहनाया गया। त्याग-स्तंभ के ब्रह्म-देव के पास खड़े होकर चामुण्डराय ने अपनी संपत्ति के एक भाग का त्याग किया। चामुण्डराय ने अजितसेनाचार्य से प्रश्न किया कि नव-निर्मित ग्राम का क्या नामकरण करना चाहिये। आचार्य ने पूछा-

'महामस्तकाभिषेक के दिन क्षीराभिषेक करने के लिये एक वृद्धा आयी थी। याद है न गोम्मट ?'

'हां, पूज्यवर, स्मरण है।'

'इसी के क्षीर से ही अभिषेक कार्य सपन्न हो गया था। तथा क्षीर प्रवाहित होकर दोनो शैल के मध्य सागर जैसा बन गया था न ?'

'हां पूज्यवर।'

'शैल की गोदवाले सरोवर का जल क्षीर के समान श्वेत है न ?'

'हा पूज्यवर।'

'वह श्वेत-सरोवर' बन गया। कन्नड़ भाषा में कहना है तो 'बेळगोळ' अतः इस ग्राम का नामकरण 'बेळगोळ' किया जा सकता है। उससे पूर्व बाहुबली के सम्मुखवाले ब्रह्मस्तंभ के नीचे भक्ति को व्यक्त करने वाली उस वृद्धा के बिंब का निर्माण करो।'

'जो आज्ञा पूज्यवर।'

आचार्य के परामर्श के अनुसार चामुण्डराय ने सभी कार्य संपूर्ण किये तथा ग्राम का नामकरण भी उन्हीं के द्वारा कराया। अखंड-द्वार के सम्मुख के त्याग ब्रह्मस्तंभ में स्वयं नेमिचद्राचार्य से धर्मोपदेश सुनने वाला दृश्य खुदवाया। इसी स्थान से 96000 स्वर्ण-मुद्राओं की आयवाले 68 ग्रामों को भगवान बाहुबली की सेवा के लिये त्यागकर प्रजा से अभिनव पौदनपुर के निर्माता की उपाधि प्राप्त की।

चामुण्डराय अब तक कटवप्र को बेळगोळ बनाने में ही लगे हुये थे। उनकी माता तथा पत्नी उनकी गतिविधियों को देखती हुयीं धर्म-चिंतन में लगी थीं। ऐसे में एक दिन काललादेवी ने अपने पुत्र से कहा-

'पुत्र, सभी कार्य तो सपन्न हो गये न ?'

'हां अम्मा।'

'आचार्य के दर्शन के लिये चलेंगे ?'

'हां, अम्मा कोई विशेष बात है क्या ?'

'उनके दर्शन की इच्छा हो रही है पुत्र।'

चामुण्डराय अपनी माता तथा पत्नी समेत आचार्य के पास चले। उस दिन उनकी माता तथा पत्नी शुभ्र वस्त्र पहने हुयी थीं, तथा निराडंबर थीं। उन्हें देखकर चामुण्डराय को आश्चर्य तो हुआ किंतु कुछ पूछा नहीं। आचार्य के पास जाकर तीनों ने वंदना की। आचार्य ने आशीर्वाद दिया-

'सद्धर्म वृद्धिरस्तु।' अनंतर आगमन का कारण पूछा। काललादेवी ने कहा-

'पूज्यवर, मेरी सारी इच्छाओ को मेरे पुत्र ने पूर्ण किया। इस जीवन में कोई इच्छा नहीं रही। ऐसी अवस्था में आत्म-कल्याण मात्र शेष रह गया है।'

'यह सत्य है माता। प्रत्येक मनुष्य की अंतिम इच्छा आत्मकल्याण ही होना चाहिये न ? यह हर्ष की बात है कि आपकी इच्छा भी वही है।'

'हां, पूज्यवर ! इसी कारण आज मैं आपके पास आयी हूं। मुझे भगवती दीक्षा दे दें पूज्यवर। काललादेवी ने अपनी इच्छा प्रकट की तो अजितादेवी ने भी वही इच्छा प्रकट की।

माता तथा पत्नी की इच्छा सुनकर चामुण्डराय कुछ क्षण स्तंभित रहे। अनंतर उन्होंने कहा-

'क्या आप मुझे इसी कारण ले आयीं अम्मा ?'

'भद्र चामुण्डराय।' आचार्य ने सावधान करके कहा-'माता पत्नी इत्यादि के प्रति आपका मोह उनके मार्ग में बाधा न बने।'

'वह बात नहीं है पूज्यवर, इसकी सूचना तक नहीं दी है मुझे इन दोनों ने।'

'जिन-दीक्षा प्राप्त करने के लिये किसी की आज्ञा अथवा अनुमति की आवश्यक्ता नहीं है। कटवप्रगिरि में इतने समय तक वास करने के पश्चात् भी आप का मोह टूटा नहीं ?

'इनके आत्मकल्याण के मार्ग में मैं बाधा नहीं बन रहा हूं आचार्यवर।' किंतु इस आयु में क्या अम्मा जिन-दीक्षा का निर्वाह कर सकती हैं ? घर में रहकर भी तो अपना आत्मकल्याण किया जा सकता है।'

'भद्र, आयु किसी भी कार्य में बाधा नहीं बन सकती। आत्मविश्वास तथा दृढ़ निर्धार से असंभव कार्य भी संभव बन जाते हैं। आपकी माता तथा पत्नी में वे दोनो गुण विद्यमान हैं। आप उसकी चिंता न करें।'

आचार्य ने दोनों को विधि के अनुसार आर्यिका की दीक्षा दी।

'ओं नमः सिद्धेभ्यः' कहती हुयी काललादेवी तथा अजितादेवी ने अपना केशलोचन कर लिया। इनके मन से शरीर का मोह टूट गया था। यह सब देखते बैठे चामुण्डराय के मन में अपने ही ऊपर तिरस्कार पैदा हुआ। अपने ही सम्मुख दो महिलाओं को माया-मोह से मुक्त होते देखकर मन में अपने को धिक्कारते हुए उन्होंने आचार्य से कहा-

'आचार्यवर, मेरे भी कार्य संपूर्ण हो गये हैं। शेष कुछ नहीं रहा, अतः मुझे भी जिन दीक्षा देने की कृपा करें। मैं भी अपना आत्मकल्याण चाहता हूं।'

'यह तो हर्ष की बात है भद्र चामुण्डराय। परंतु हम आपको जिन-दीक्षा नही देगे।'

'क्यो पूज्यवर ? क्या मैं उसके योग्य नहीं हूं ?'

'यह बात नही है। अभी आपको महत्वपूर्ण कार्य करना है।'

'क्या अभी आप मुझसे कार्य करवाना चाहते हैं, पूज्यवर ? वह कौन सा कार्य शेष है ?'

'मदस्मित होकर आचार्य ने कहा-'आपसे अभी अनेक ग्रंथों की रचना शेष है। अब तक आप योद्धा थे, अब आपको कवि बनना है।'

'जो आज्ञा। आपका आशीर्वाद रहा तो वह कार्य भी मैं पूर्ण करुंगा।' सम्मति प्रकट करके वे अपने शिविर लौट चले।

24

अगले दिन प्रातः प्रातर्विधियो से निवृत्त होकर चामुण्डराय ने कटवप्रगिरि के जिनालयों के दर्शन किये। बाहुबली की वंदना करके भद्रबाहु चंद्रगुप्त शिला शासन के पास बैठ गये। वहां से फिर मंदस्मित बाहुबली को देखने लगे। कुछ क्षण पश्चात् उनकी दृष्टि कुछ दिन पूर्व रन्नमय्या के साथ खोदे हुये अपने हस्ताक्षर पर पड़ी। उस दिन रन्नमय्या के साथ किया हुआ वार्तालाप का स्मरण हो आया। रन्नमय्या का वही प्रश्न-'आप साहित्य की रचना क्यो नहीं करते ?' मन मे प्रतिध्वनित होने लगा। उसी के बारे में सोचते वे नेमिचंद्राचार्य के पास आये। वदना करके बैठ गये। आचार्य ने यथावत आशीर्वाद दिया 'सद्धर्म वृद्धिरस्तु।' विचार में डूबे हुये चामुण्डराय को देखकर आचार्य ने प्रश्न किया-'क्यों भद्र ? आज इतने शीघ्र पधारे ?'

'क्या करू पूज्यवर ? मेरी अम्मा तथा पत्नी को तो आपने जिन-दीक्षा देकर उद्धार किया। मुझसे आप और कार्य करवाना चाहते है।'

'हां यह सत्य है चामुण्डराय। धर्म की रक्षा के लिये धर्म-पीठ की स्थापना करके आपने हमे पीठाधिकारी बना दिया है न ?

'हां, पूज्यवर।'

'तब तो हमे वह कार्य करना चाहिए ?'

'हां पूज्यवर। मुझे भी इस धर्म-कार्य में भाग लेने का अवसर प्रदान कीजिये। धर्म के लिये मै अपने प्राणों को भी अर्पित करता हूं।'

'आप शीघ्रता न करें। धर्म की रक्षा तब होगी जब सभी लोग धर्म को समझ लेगे। अतः वह कार्य होना चाहिये न ?'

'हा, पूज्यवर।'

'तब आपको ज्ञात होगा कि सस्कृत प्राकृत भाषा मे रचे गये आगमो को लोक-भाषा में लिखना आवश्यक है। वह कार्य आपको करना है।'

'मुझमें वह कविता-शक्ति नहीं है पूज्यवर।'

'कविता-शक्ति की क्या आवश्यक्ता है आपको ? जिनसेनाचार्य तथा गुणभद्राचार्य ने सस्कृत में महापुराण तथा उत्तरपुराण की रचना नहीं की ? जिनसेनाचार्य के पूर्वपुराण के आधार पर पंप महाकवि ने आदिपुराण की रचना की है। उनकी विद्वत्ता की कोई सीमा नहीं है। इसमे निहित सारे विषय पंडितो के लिये मात्र हैं। अर्थात् धर्म केवल पंडितों की सपत्ति बन जाती है। अत....!'

'यह सत्य है पूज्यवर। किंतु वैसी कृतियों की रचना मैं नहीं कर सकता।'

'हम भी वही कह रहे हैं । काव्य का नाम लेते ही छंद, मात्रा, लय, प्रास पंक्ति इत्यादि नियम आ जाते है । जिनको इनका ज्ञान है वे ही काव्य की रचना कर सकते हैं । तथा वैसे पंडित ही उन रचनाओं का लाभ उठा सकते हैं । सामान्य जन धर्म से दूर ही रह जाते हैं ।'

'तो मैं क्या करू पूज्यवर ?'

'गंगवाडी में सामान्य जन की भाषा कौन सी है ?'

'कन्नड़ भाषा'

'क्या आपको ज्ञात है कि कन्नड़ में किस ग्रंथ को अधिक लोग पढ़ते हैं?'

'पंप महाकवि के आदिपुराण तथा विक्रमार्जुन विजय को पूज्यवर ?'

'आपकी यह धारणा सही नहीं है । वे ग्रंथ भी विद्वानों के ही हैं । विद्वानों के संपर्क मे रहने से आपकी धारणा ऐसी है ।'

'तो कौन सा ग्रंथ सामान्य जन में अधिक प्रिय है आचार्यवर ?'

'शिवकोटि आचार्य की गद्य-रचना 'वड्डाराधने' सामान्य लोगों मे अधिक प्रिय है । क्या आप नहीं जानते ?' यह कन्नड़ की एक अत्यंत महत्वपूर्ण कृति है ।'

'हां, पूज्यवर । यह तो सत्य है कि सामान्य लोग इसी ग्रंथ को आदर से अधिक पढ़ते हैं । उसकी कथाओं को अति उत्साह से, उत्सुकता से सुनते हैं ।'

'आप भी इन छंद, मात्रा, लय, प्रास इत्यादि को त्यागकर गद्य-रूप में किसी ग्रंथ की रचना करें तो कन्नड़ साहित्य के गद्य-विधा में आपका द्वितीय स्थान होगा ।'

'हां, पूज्यवर मै स्वीकार करता हूं कि आपका आशीर्वाद तथा प्रोत्साहन यदि निरंतर प्राप्त होता रहे तो मैं अवश्य यह कार्य करूंगा ।'

'हमारे आशीर्वाद तथा सहयोग तो सदैव आपके साथ हैं ।' मंदस्मित होकर आचार्य ने कहा ।'

'ग्रंथ रचना के लिये कौन सा विषय ले लूं पूज्यवर ?'

'जैन शास्त्र में विषयों का अभाव नहीं है । आपने तो शास्त्र का अध्ययन किया है । अतः जो विषय आपको ठीक लगे उस पर लिख सकते हैं ।'

'पूर्वपुराण तथा उत्तरपुराण में वर्णित त्रिषष्ठि शलाका पुरुषों के जीवन चरित पर यदि रचना करूं तो ?'

'यह विषय तो उत्तम है । महान-आत्माओं के जीवन-चरित को सामान्य पाठकों तक पहुंचाने का पुण्य आपको प्राप्त होगा । रचना-कार्य शीघ्र ही प्रारंभ करें । शुभस्य शीघ्रं ।'

'जो आज्ञा पूज्यवर।' मुनिचरणों की वंदना करके चामुण्डराय भद्रबाहु गुफा की ओर चले।

आचार्य का आशीर्वाद प्राप्त होते ही चामुण्डराय ने ग्रंथों का अध्ययन प्रारंभ किया। जिनसेनाचार्य के पूर्वपुराण, गुणभद्राचार्य के उत्तरपुराण, शिवकोटि आचार्य के वड्डाराधने, पंप-महाकवि के आदिपुराण इत्यादि ग्रथों का अध्ययन अनेक बार किया। प्रतिनित्य आचार्य के साथ इन ग्रंथों पर चर्चा की। अनेक मास के अध्ययन तथा वार्तालाप से उनमें आत्मविश्वास जागृत हो गया कि वे किसी ग्रंथ की रचना कर सकते हैं। भगवान बाहुबली की वंदना करके अजितसेनाचार्य तथा नेमिचंद्राचार्य का स्मरण करके ग्रंथ की रचना प्रारभ की। अपने शिष्य चामुण्डराय का एकाग्रचित्त तथा आत्मविश्वास देखकर नेमिचंद्राचार्य को बड़ा हर्ष हुआ।

चामुण्डराय का ग्रंथ रचना कार्य तीव्र गति से चल रहा था। मन में उठे संदेह का निवारण कर लेने के लिये आचार्य से चर्चा करते थे। आचार्य भी चामुण्डराय के उत्साह को प्रोत्साहित करते रहे। उसके परिणाम स्वरूप 'त्रिषष्ठि शलाका पुरुष चरित' की रचना शीघ्र ही पूर्ण करके चामुण्डराय ने आचार्य को अर्पित कर दी। ताड़पत्र पर लिखित 'त्रिषष्ठि शलाका पुरुष चरित' की प्रति हाथ में लेकर आचार्य ने अपनी प्रसन्नता प्रकट करते हुये कहा-'भद्र चामुण्डय्या, आपने ग्रंथ की रचना बहुत शीघ्र ही समाप्त की है। यह कार्य सत्य ही सराहनीय है।'

'यह आपके आशीर्वाद तथा प्रोत्साहन का फल है पूज्यवर।' चामुण्डराय ने विनय से कहा। 'इस ग्रंथ की रचना आपके ही कारण हो गयी। अतः मैं इस ग्रंथ को आपको ही अर्पित करता हूं। आप पढ़कर अपना अभिप्राय देने की कृपा करें।

'क्यों नहीं। अवश्य पढ़ेंगे। कल ही हम अपना अभिप्राय दे देंगे।'

मुनिचरणो की वंदना करके चामुण्डराय अपने शिविर की ओर लौट चले। आचार्य का अभिप्राय कैसा होगा ? इसी दुविधा मे उन्होंने उस दिन का समय व्यतीत किया।

चामुण्डराय के लौटते ही आचार्य ने ग्रंथ-वाचन प्रारंभ किया। वाचन करते-करते चामुण्डराय की भाषा, शैली तथा कल्पना-शक्ति देखकर आश्चर्यचकित रह गये। उन्हें लगा कि यह गद्य-कृति भविष्य के दिनों में महत्वपूर्ण बन जायेगी। कई बार पढ़ने पर भी उनका मन तृप्त नहीं हुआ।

प्रातः चामुण्डराय शीघ्र ही आचार्य के दर्शन के लिये आये। वंदना करके बैठ गये। आशीर्वाद देकर चामुण्डराय की भावनाओं को देखकर कहा-'चामुण्डराय आपने अद्‌भुत कृति की रचना की है। आप धन्य हैं।'

'यह सब आपके आशीर्वाद का ही फल है पूज्यवर।'

'आपकी इस गद्य-रचना पर स्वयं कन्नड़ गद्य-विधा में दूसरी रचना होने पर भी यह गात्र तथा गुण में महान कृति है।

'यह आपकी महानता है जो मुझ सामान्य को उच्च स्थान दे रहे हैं। वैसे यह कृति तो आप ही की प्रेरणा का फल है।'

'नहीं भद्र! अजितसेनाचार्य के आशीर्वाद तथा प्रेरणा का फल है। इस बाहुबली का निर्माण करके अंधकार में पड़े महाशिल्पी को प्रकाश मे लाने का श्रेय आप को है। अब हमने कन्नड़ के एक श्रेष्ठ गद्य-रचनाकार को प्रकाश में लाने का प्रयत्न मात्र किया है।' अभिमान से नेमिचंद्राचार्य ने अपनी प्रसन्नता प्रकट की।

'मुझ पर आपका बड़ा अभिमान है पूज्यवर।'

'नहीं, हम केवल आपका गुणगान करने के लिये नहीं कह रहे हैं चामुण्डराय। सत्य ही आपने इस कृति की रचना करके कन्नड़ साहित्य को एक उत्कृष्ट कृति प्रदान की है। कन्नड़ प्रजा सदैव आपकी आभारी रहेगी। इस ग्रंथ मे कोई परिवर्तन की आवश्यकता नहीं है। इसकी अनेक प्रतियां तैयार करा कर शास्त्रदान करें। इस ग्रंथ की रचना आपने की है न ? अतः इस ग्रथ को 'चामुण्डराय पुराण' कहेगे। इसी नाम से ही इसकी प्रतियां तैयार करा लेना।'

'यह तो 'त्रिषष्ठि'शलाका पुरुष पुराण' है पूज्यवर। अतः इसे मेरे नाम से क्यो अभिहित करते हैं? क्या यह उचित होगा? नहीं पूज्यवर, ऐसा नहीं होता।'

आप एक महापुरुष ही तो हैं। आपका यह कार्य आने वाली संतान के लिये महत्वपूर्ण होगा। उन्हे ज्ञान का प्रकाश प्रदान करेगा, प्रेरणा देगा। आप हमारे आदेश का पालन करें।'

'जो आज्ञा पूज्यवर।' नमस्कार करके चामुण्डराय जिनालय के दर्शन के लिये निकल पड़े।

25

इस दिन चामुण्डराय नेमिचंद्राचार्य के साथ भद्रबाहु गुफा के पास बैठकर धार्मिक चर्चा में लगे थे। तलवनपुर के एक राजभट ने आकर दोनों का वंदन किया। प्रभु राजमल्ल के राजभट को पहचानकर चामुण्डराय ने प्रश्न किया-'क्या समाचार है ? आचार्य, प्रभु तथा प्रजा सब कुशल हैं न ?'

'हां अमात्यवर। किंतु..... ....।'

'कितु क्या ?'

'अजितसेनाचार्य ने यम सल्लेखन व्रत ले लिया हैं।'

'क्या ? आचार्य ने यम-सल्लेखन व्रत ले लिया है ?' नेमिचंद्राचार्य ने तुरत प्रश्न किया। यह समाचार सुनकर चामुण्डराय स्तंभित रह गये। इनके नेत्र भर आये।

'हां पूज्यवर। यह समाचार पहुंचाने के लिये ही प्रभु ने मुझे भेजा है।'

'पूज्यवर आचार्य के दर्शन कर लेने की अनुमति दे।' चामुण्डराय ने गद्‌गदित कठ से प्रार्थना की।

'पूज्य अजितसेनाचार्य बहुत दुर्बल हो गये है, अब बहुत समय जीवित रहने की आशा नही है।' राज-प्रतिनिधि ने स्पष्ट किया।

'भद्र चामुण्डराय, हम भी आना चाहते है। किंतु हमारे पहुचने में विलब होगा। अत· आचार्य के दर्शन तो हमे होना कठिन है। आप जाकर आइए। पूज्यवर को हमारा प्रणाम कहना।' नेमिचंद्राचार्य ने चामुण्डराय को विदा किया।

नेमिचंद्राचार्य के आदेशानुसार चामुण्डराय अश्वारूढ़ होकर राजप्रतिनिधि के साथ वायुवेग से तलवनपुर चले। आचार्य अंतिम श्वास ले रहे थे। प्रभु राजमल्ल, राज्य के वरिष्ठ अधिकारी, राजधानी के गणमान्य व्यक्ति इत्यादि अनेक भक्तगण सब अजितसेनाचार्य के चारों ओर एकत्रित हो गये थे। चामुण्डराय के पहुचते ही उन्हें आचार्य के पास ले गये। सभी लोग णमोकार मंत्र का पठन कर रहे थे। आचार्य भी सिद्ध परमेष्ठियो का ध्यान कर रहे थे।

चामुण्डराय ने आचार्य के पाद-स्पर्श कर नमस्कार किया, 'पूज्यवर।'

चामुण्डराय की ध्वनि सुनकर आचार्य ने एक बार नेत्र खोलकर देखा। अगले ही क्षण उनके नेत्र बंद हो गये तो फिर खुले नहीं। उनके प्राण पखेरू उड़ गये थे।

चामुण्डराय के दुख का बांध टूट पड़ा। वहां एकत्रित सभी जन इनको सांत्वना देने का प्रयत्न करने लगे। प्रभु राजमल्ल ने उनको अपने ही पास रखकर सात्वना दी।

एक दो दिन पश्चात् जब चामुण्डराय की मानसिक स्थिति सामान्य हुई तो कहने लगे- 'प्रभु मुझे बेलगोल जाने की अनुमति प्रदान करें ।'

'क्यों मंत्रिवर, अब तो वहां का कार्य संपूर्ण हो गया है न ? यहीं रह जाइये न । प्रभु ने आग्रह किया ।

'नहीं प्रभु, आचार्यवर ही नहीं रहे तो मैं यहां रहकर क्या करूंगा ? अब तक मैंने राज्य के कल्याण का प्रयत्न किया । अब आत्म-कल्याण का प्रयत्न करना चाहता हू । इसके लिये बेळगोल ही योग्य स्थान है । नेमिचंद्राचार्य के साथ अपना अंतिम समय व्यतीत करना चाहता हूं, अतः आप मुझे न रोकें ।'

'अब आप पर हम भी कोई दायित्व नहीं लादेंगे । आपके पुत्र जिनदेवण तो समर्थ रीति से कार्य का निर्वाह कर रहे हैं । आप राजनीति से मुक्त हैं । यहीं रहकर आप अपना आत्म-कल्याण कर सकते हैं न ?'

'नहीं प्रभु ! मैं अपना अंतिम समय बाहुबली के सन्निधान में, नेमिचंद्राचार्य के सम्मुख व्यतीत करना चाहता हूं । मुझे बेळगोल के लिये प्रस्थान करने की अनुमति दीजिये ।'

'जैसी आपकी इच्छा ।' प्रभु राजमल्ल ने अनुमति देकर चामुण्डराय को विदा दी ।

26

चामुण्डराय के बेळगोल पहुंचते ही एक अन्य समाचार मिला । अजितसेनाचार्य की सल्लेखना का समाचार सुनते ही उनकी माता काललादेवी तथा पत्नी अजितादेवी ने भी सल्लेखना व्रत ले लिया था । कुछ समय पूर्व ही तो उन दोनों ने जिन-दीक्षा ली थी ।'

यह समाचार मिलते ही चामुण्डराय नेमिचंद्राचार्य के पास चले तथा गदगद कंठ से कहने लगे-

'यह क्या हो रहा है पूज्यवर ? मेरे सभी आत्मीय मुझ से क्यों दूर हो रहे हैं ? मैंने ऐसा कौन सा पाप किया है ? महाशिल्पी मुझे सूचना दिये बिना मुझसे दूर चले गये । मस्तकाभिषेक के समय की वृद्धा जिसके क्षीर से मस्तकाभिषेक का कार्यपूर्ण हो गया, वह भी मिली नहीं । आचार्य अजितसेनाचार्य ने मुझे त्याग दिया । अब जिन-दीक्षा लेने वाली मेरी माता तथा पत्नी भी मुझे त्यागकर चलने का निर्णय ले चुकी हैं । अब तक मैं जीवित क्यों हूं पूज्यवर ?'

'भद्र चामुण्डराय ! इस संसार में कोई किसी का नहीं है । यह एक भ्रम है कि सब अपने हैं । आप महाभाग्यशाली हैं । आपको स्मरण होगा, धर्मपीठ की स्थापना करते समय आपने क्या कहा था ?'

'क्या कहा था पूज्यवर ?'

'आपने कहा था कि केवल अपना आत्मकल्याण कर लेना कोई महान कार्य नहीं है । वे स्वार्थी हैं । अपने साथ दूसरों का भी आत्मोद्धार करने वाले महान हैं । उन सारी बातों का अनुसरण आपने किया है । आपसे अनेक लोगों का कल्याण हो गया था । अभी कुछ और समय तक आपको जिन-धर्म की रक्षा करनी है । अतः धीरज रखिये । आचार्य ने समझाया ।

आचार्य तथा चामुण्डराय सल्लेखना व्रत धारिणी काललादेवी तथा अजितादेवी के पास सदैव रहकर धर्म की चर्चा करते रहे । इनके सान्निध्य के परिणाम स्वरूप व दोनों व्रतधारिणी क्षीण होने पर भी प्रज्जवलित लगती थी । कुछ ही दिनों में शुभ-मुहूर्त में दोनों ने देह त्याग कर स्वर्ग प्राप्त कर लिया ।

इन सारी घटनाओं के पश्चात् भी चामुण्डराय ने अपने मन को स्थिर रखा । एक दिन नेमिनाथ जिनालय मे शास्त्राध्ययन में लीन नेमिचंद्राचार्य के पास गये । ग्रंथ को पार्श्व में रखते हुये आचार्य ने कहा-'आइए, भद्र चामुण्डराय । सब कुशल मंगल है न ?'

मुनि की वंदना करके बैठते हुये चामुण्डराय ने कहा-'हां पूज्यवर, सब कुशल मंगल है । किंतु आपने मेरे आते ही ग्रंथ क्यों बंद कर दिया ? क्या उस ग्रथ में वर्णित विषय सुनने का मेरा सौभाग्य नहीं है ?'

'ऐसी बात नहीं है भद्र । मै जिस ग्रंथ का अध्ययन कर रहा था वह जिनागम में अत्युन्नत ग्रथ 'धवल-जयधवल' है । ये ग्रंथ आचार्य भूतबलि तथा पुष्पदंत द्वारा रचित हैं ।'

'उन ग्रंथो को समझ लेने का क्या मेरा भाग्य नहीं है ?'

'जैन-सिद्धान्त को संपूर्ण रूप से समझ लेने के पश्चात् ही इन ग्रंथों का अध्ययन किया जा सकता है । वरन् ये ग्रंथ समझ में नहीं आयेंगे । इसीलिये हमने ग्रंथ रखा ।'

'सामान्य जन भी यदि इन ग्रंथों का अध्ययन करना चाहें तो ?'

'आत्मज्ञान प्राप्त कर लेने वाले धीरे-धीरे प्रयत्न करते हुये इस ग्रंथ को अपने आप समझ सकते हैं । क्रमबद्ध रीति से अध्ययन करने से यह संभव है, अन्यथा नहीं । क्रम यदि टूट गया तो सिद्धान्त सब कठिन लगते हैं । ऐसी अवस्था में धर्म में अविश्वास पैदा हो सकता है ।'

'सत्य वचन पूज्यवर ! अब तक अनेक कार्यों में लगे रहने के कारण आत्मा को पहचानने में विफल हुआ। इस ग्रंथ का अध्ययन करने के लिये आवश्यक पांडित्य तथा समय दोनो मेरे पास नहीं। किंतु मेरे लिये क्या आप इस ग्रंथ को सरल भाषा में लिख सकते हैं पूज्यवर ?'

'आप भव्य-जीव हैं चामुण्डराय। आत्मा को समझने का प्रयत्न करने वाले अत्यंत विरल हैं। आपका अनुरोध हम कैसे टाल सकते हैं गोम्मट ?'

'आपकी यह मुझ पर बड़ी कृपा होगी पूज्यवर।'

'एक बात का ध्यान रहे भद्र। यह ग्रंथ केवल आत्मा को पहचानने का प्रयत्न करने वालो के लिये है। अतः आप प्रति नित्य प्रातः जिनालय पधारिये, यहीं चर्चा करेंगे। इसमें वर्णित तत्वों को हम सरल भाषा में संग्रहित करने का प्रयत्न करेंगे। यह सग्रह हम आपके लिये कर रहे हैं। अतः ग्रंथ का नाम 'गोम्मटसार' रखेंगे। 'आचार्य की यह बात सुनकर चामुण्डराय को बड़ा हर्ष हुआ। अपने ही कानों पर विश्वास नहीं हुआ।' मनमे संदेह हुआ कि क्या ऐसा भाग्य मिलेगा।'

'मैं धन्य हो गया आचार्यवर। क्या आप आज्ञा देंगे कि आपके द्वारा रचे जाने वाले 'गोम्मट-सार' ग्रन्थ की व्याख्या कन्नड़ में लिखता चलूं ? आत्मा तथा तत्वों को समझने की श्रद्धा रखने वाले कन्नड़ के सामान्य व्यक्ति को भी आत्म-कल्याण का मार्ग मिल सके।'

'आपके विचार, योजनाएं तथा कार्य सदैव लोक-कल्याण के मार्ग को प्रशस्त बनाने वाले ही होते हैं। हम उस कार्य में बाधा कैसे बन सकते हैं ? आप संतोष से उसकी व्याख्या लिख सकते हैं। हम यह कार्य कल से ही प्रारंभ करेंगे।'

'जो आज्ञा पूज्यवर !' आचार्यवर की वंदना करके चामुण्डराय जिनालयों के दर्शन के पश्चात् अत्यंत संतोष से अपने शिविर पहुंचे।

27

अगले दिन नेमिचंद्राचार्य के आगमन के पूर्व ही चामुण्डराय नेमि तीर्थंकर-जिनालय मे उपस्थित थे। नेमिचंद्राचार्य को चामुण्डराय की उत्सुकता देखकर बड़ा हर्ष हुआ। उन्होने कहा-'क्यों भद्र, इतने शीघ्र आ गये हैं।'

'हां पूज्यवर। आपने कल आज्ञा जो दी थी।' इसका पालन मात्र किया है मैंने।' कहते हुए मुनिचरणो की वंदना की।

नेमिचंद्राचार्य ने उस दिन से धवल-जयधवल ग्रंथ का पठन प्रारभ किया। साथ ही चामुण्डराय को उसका विवरण भी देते चले तथा सरल शैली मे उन विषयों का संग्रह भी करते चले। इस प्रकार प्रति-नित्य दोनों मे स्वाध्याय, चर्चा इत्यादि चलने लगी। प्रति-नित्य आचार्य अल्प प्रकरण पढ़ने के पश्चात् सरल भाषा मे उसका अर्थ बता रहे थे। चामुण्डराय सरल कन्नड़ भाषा में उसकी व्याख्या लिखते रहे। इस प्रकार छः मास में 'गोम्मटसार' पूर्ण रूप से तैयार हो गया। चामुण्डराय ने अपने द्वारा रचित कन्नड़ व्याख्या के सग्रह को आचार्य जी के चरणों में अर्पित कर दिया। प्रति नित्य ही आचार्य ने कन्नड़ व्याख्या की इस रचना का अवलोकन किया था। अतः उन्होंने कहा-

'भद्र चामुण्डाराय, हमने समझा था कि आप केवल युद्धभूमि में ही वीर है किंतु आप धर्म-क्षेत्र में भी वीर-मार्तण्ड हैं। अतः आपसे रचित इस गोम्मटसार की व्यख्या को हम 'वीर-मार्तण्ड वृत्ति' नाम रखते हैं।'

'जैसी आपकी इच्छा पूज्यवर।' मेरी इच्छा है कि इसकी प्रतिया बनवाकर शास्त्रदान करूं। कृपया आप अनुमति प्रदान करें।'

'धर्म कार्य के लिये किसी की अनुमति की आवश्यक्ता नहीं है भद्र। आप प्रसन्नता से करें। यह तो हमारे लिये बड़ी प्रसन्नता की बात है।' आचार्य ने आशीर्वाद देते हुये कहा।

नेमिचंद्राचार्य की अनुमति प्राप्त होते ही चामुण्डराय ने 'गोम्मटसार' तथा 'वीर मार्तण्ड वृत्ति' की प्रतियां बनाने के लिये अनेक लिपिकों को नियुक्त किया। 'त्रिषष्ठि शलाका पुरुष पुराण' ग्रंथ की प्रतियां भी तैयार हो रही थीं।

कुछ ही दिनों में तीनों ग्रंथों की अनेक प्रतियां तैयार हो गयीं। संतोष से यह संदेश आचार्य को देने चले।

'पूज्यवर, तीनों ग्रंथों की प्रतियां तैयार हो गयी हैं। कल ही बाहुबली जिनालय तथा अन्य जिनालयों में पूजा का प्रबंध करूंगा। तत्पश्चात् आपके सम्मुख शास्त्रदान करना चाहता हूं।

'जैसी तुम्हारी इच्छा ।'

अगले दिन चामुण्डराय ने कटवप्र के सभी जिनालयों की पूजा की व्यवस्था की। भगवान बाहुबली के चरणों की भी पूजा का प्रबंध किया। आचार्य के सम्मुख यह पूजा का कार्य निर्विघ्न सपन्न हुआ। तत्पश्चात् त्याग के ब्रह्मस्तंभ के पास आकर तीनो ग्रंथो की प्रतियों का दान किया। वहां एकत्रित जन-समूह को आचार्य ने धर्मोपदेश दिया। उपदेश के अंत में चामुण्डराय का गुणगान करके 'सम्यकत्व रत्नाकर', 'शौचाभरण', 'गुण-रत्न' इत्यादि उपाधियो से आभूषित किया। जन-समूह को वे उपाधियां अच्छी लगीं। अतः उन्हीं उपाधियों से चामुण्डराय का जय-जयकार किया। अनंतर चामुण्डराय ने आचार्य तथा जनसमूह के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट की। उसी समय चामुण्डराय ने अपनी सारी सपत्ति के दान की घोषणा की। आचार्य को बड़ा आश्चर्य हुआ। उनको चामुण्डराय की संपत्ति की गणना नही थी। सभारंभ के अनंतर चामुण्डराय अपने शिविर न जाकर नेमिचंद्राचार्य के साथ कटवप्र आ गये।

'क्यों भद्र, अपने शिविर जाना नहीं है क्या ?'

'कौन सा शिविर पूज्यवर ?' आज से आपके चरणों में ही मेरा शिविर है। अब मेरा अपना कुछ भी नहीं है।'

चामुण्डराय की यह बातें सुनकर आचार्य को आश्चर्य तो हुआ, किंतु समझाने का प्रयत्न करने लगे। ऐसा क्यो कर रहे हैं। आपको..............।'

'अब मैं कुछ भी सुनने के लिये तैयार नहीं हूं पूज्यवर। मेरे ही सम्मुख माताश्री तथा पत्नी दोनों ने जिन-दीक्षा प्राप्त की तथा अपना आत्म-कल्याण भी कर लिया, किंतु मैं अब भी इस सांसारिक व्यवहार में फंसा हूँ। मैंने उसी समय आपसे प्रार्थना की थी। किंतु आपने यह कहकर रोका कि अभी कुछ कार्य शेष है। अब तो कोई भी कार्य शेष नहीं है न पूज्यवर ? अब तो कृपया मुझे अपना आत्मकल्याण कर लेने दीजिये। वही एक कार्य शेष रह गया है।'

'यह तो सत्य है। परंतु अभी शीघ्रता क्यों ?'

'मैने शीघ्रता कब की है पूज्यवर ? अब तो मेरी आयु ढल चुकी है। अब मुझ से कोई भी कार्य नहीं हो सकता। धवल-जयधवल ग्रंथों का अध्ययन करने के पश्चात् भी क्या आत्मकल्याण नहीं कर लेना चाहिये पूज्यवर ?' विनीत होकर चामुण्डाराय ने पूछा।

आचार्य को लगा कि चामुण्डराय का मन परिपक्व हो गया है, अब उसका डिगना असंभव है। सम्मति देकर उनको अपने साथ भद्रवाहु गुफा की ओर ले चले।

यह समाचार गंगवाडी भर मे फैल गया कि चामुण्डराय जिन-दीक्षा प्राप्त करने वाले हैं। प्रभु राजमल्ल, जिनदेवण, कल्याण के प्रभु तैलप, राज्य के वरिष्ठ अधिकारी, मंत्रिगण, श्रेष्ठीगण सब शीघ्रता से बेळगोल आकर चामुण्डराय के मन को परिवर्तित करने का प्रयत्न करने लगे, किंतु 'गोम्मटसार' के प्रभाव के कारण आत्मज्ञान की ओर अग्रसर होने वाले उनके मन को पीछे ला नहीं सके। अंत में नेमिचद्राचार्य ने उनके वैराग्य भाव का आदर करते हुये सबके सम्मुख चामुण्डराय को जिनदीक्षा प्रदान कर दी।

चामुण्डराय मुनि बन गये।

तत्पश्चात् सदैव मौन बने रहे। केवल नेमिचंद्राचार्य के सन्निधान मे शास्त्र चर्चा करते थे। समय बीतते वे दुर्बल होते चले, अतः मुनि चामुण्डराय नेमिचंद्राचार्य से सल्लेखना व्रत की प्रार्थना करने लगे किंतु आचार्य टालते रहे।

कुछ दिन पश्चात् मुनि चामुण्डराय जब संपूर्ण रीति से दुर्बल हो गये तो आचार्य ने उन्हे सल्लेखना व्रत दे दिया। इस समाचार के फैलते ही लोग उनके दर्शन के लिये आने लगे। भद्रबाहु गुफा के समीप से बाहुबली के दर्शन करते-करते, णमोकार मंत्र का पठन करते-करते, सल्लेखना व्रतधारी महामुनि चामुण्डराय ने इहलोक त्यागकर स्वर्गारोहण किया।

जन-समूह दुख-सागर में डूब गया।

गंगवाडी शोकबाड़ी बन गयी।

उस दिन का सूर्यास्त होतेही गंगवाड़ी का मार्तण्ड भी अस्त हो गया।

गंगवाड़ी राज्य पर धीरे-धीरे अंधकार छाने लगा।
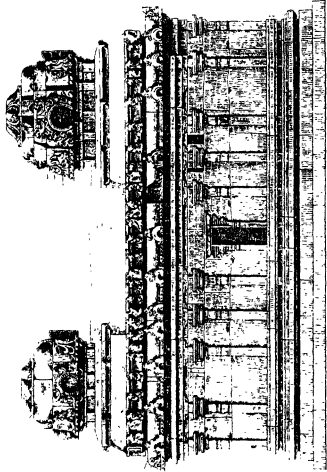
सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य ने मुनि-दीक्षा लेकर यहाँ तपस्या की और यहीं सल्लेखना धारण करके स्वर्ग गमन किया.
यहां उनका इतिहास सुरक्षित है. कई बार इस चन्द्रगुप्त बसदि का जीर्णोद्धार होता रहा.

चन्द्रगिरि पर्वत
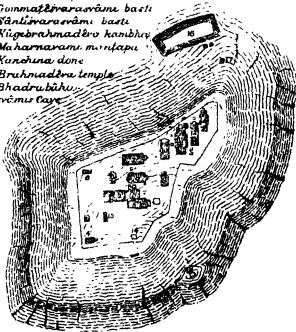
चन्द्रगिरि पर्वत पर ईसापूर्व तीसरी शताब्दी से आज तक के प्रमाण मिलतें हैं. ऐतिहासिक शैलोत्कीर्ण भद्रबाहु गुफा के साथ-साथ, प्रायः हर शताब्दी के मन्दिर, मानस्तम्भ, शिला-शासन और मूर्तिलेख विपुल मात्रा में मिले हैं.
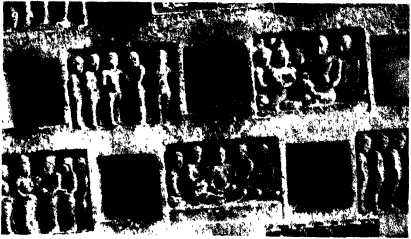
मुनियों द्वारा वन्दित, समाधिसंलगन भद्रबाहु स्वामी

सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य